॥ ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः ॥

अध्यात्म प्रसाद

वर्ष–12 जुलाई–अगस्त–सितम्बर 2013 अंक 48

सामाजिक, नैतिक एवम् आध्यात्मिक उन्नति व
वैचारिक नव जागरण के लिए सचेष्ट त्रैमासिक पत्रिका

अखिल भारतीय सोहम् महामण्डल

परिक्रमा मार्ग, वृन्दावन (मथुरा) उ. प्र. ★ फोन : 0565–2540002

सोऽहमस्मि इतिवृति अखण्डा, दीपसिखा सोई परम प्रचण्डा।
आतम अनुभव सुख सुप्रकासा, तब भव मूल भेद भ्रम नासा॥

स्तवन

वन्दे वन्दारुमन्दारमिन्दुभूषणनन्दनम्। अमन्दानन्दसंदोहबन्धुरं सिन्धुराननम्॥

जो वन्दना करने वाले भक्तजनों के लिये मन्दार (कल्पवृक्ष) के समान इच्छापूरक है, चन्द्रभूषण शिव को आनन्दित करने वाले पुत्र हैं और अमन्दानन्दराशि से मनोहर प्रतीत होते हैं, उन सिन्धुवरवदन (गजानन) की मैं स्तुति करता हूँ।

हस्तपङ्कजनिविष्टमोदकव्याजसंचरदशेषपुमर्थम्। नौमि किंचिदवधूनितशुण्डादण्डकुण्डलितमण्डितगण्डम्॥

जिनके चारों कर–कमलों में रखे हुए लड्डू के व्याज से चारों पुरुषार्थ ही वहाँ संचार करते हैं। कुछ–कुछ हिलाये जाते हुए शुण्डदण्डका जो कुण्डलाकार रूप है, उससे मण्डित गण्डस्थलवाले उन गणेश जी की मैं स्तुति करना हूँ।

अगजाननपद्मार्कं गजाननमहर्निशम्। अनेकदं तं भक्तानामेकदन्तमुपास्महे॥

जो गिरिराजनन्दिनी उमा के मुख–कमल को विकसित करने के लिये सूर्यरूप हैं और भक्तों को अनेकानेक अभीष्ट वस्तुएँ प्रदान करते हैं, उन एकदन्तधारी गजानन की हम दिन–रात उपासना करते हैं।

सोहम्

पूज्य गुरु महाराज श्री के आगामी कार्यक्रम

जून से अक्टूबर तक–2013

दिनांक	कार्यक्रम	स्थान
3 जून से 16 जुलाई तक	प्रवास	हरिद्वार (उत्तराखण्ड)
18 जुलाई 2013	गुरुपूजा	लुधियाना (पंजाब)
20 जुलाई 2013	गुरुपूजा	फतेहाबाद (हरियाणा)
21–22 जुलाई 2013	गुरुपूजा	वृन्दावन, जि0 मथुरा (उ0प्र0)
21–28 अगस्त 2013	प्रवास	वृन्दावन, जि0 मथुरा (उ0प्र0)
30 अगस्त से 3 सितम्बर तक	प्रवचन	उकलाना मण्डी (हरियाणा)
4 से 9 सितम्बर 2013	सन्त सम्मेलन	फतेहाबाद (हरियाणा)
10 से 14 सितम्बर 2013	प्रवचन	रामपुर मनीहारन, जिला सहारनपुर (उ. प्र.)
15 से 20 सितम्बर 2013	प्रवचन	बसईदारापुर, दिल्ली
21 से 27 सितम्बर 2013	प्रवचन	विवेक विहार, दिल्ली
28 सितम्बर से 3 अक्टूबर तक	प्रवचन	सन्देश बिहार, दिल्ली

संस्थापक

अनन्तश्रीविभूषित श्रद्धेय श्रीस्वामी विवेकानन्द जी महाराज

★ संरक्षक मण्डल ★

श्री महावीर प्रसाद जिन्दल, हिसार
श्रीराम कुमार रावलवासिया, हिसार
श्रीरामेश्वरदास अग्रवाल, अम्बाला
श्री केदारनाथ रावलवासिया, कोलकाता
श्री बालमुकुन्द गोयल, सोनीपत
श्री पदम सैन बंसल, जीन्द
श्री कृष्ण लाल बुद्धिराजा, लुधियाना
श्री वीरेन्द्र कुमार चौपड़ा, लुधियाना
श्री सरूप चन्द गुप्ता, दिड़वा
श्री धीरेन्द्र गुप्ता, फिरोजाबाद
श्री मोहन लाल गुप्ता, धूरी
श्री राजकुमार गुप्ता, पातड़ा
श्री श्यामलालजी जैन, अठूर
श्री सुभाषचन्द्रजी गुप्ता, जीन्द
श्री नरेश जी गर्ग, गुड़गाँव
श्रीचन्द्रप्रकाशजी शर्मा, फिरोजाबाद

★ व्यवस्थापक :
स्वामी देवस्वरूपानन्द

★ सम्पादक :
स्वामी राघवानन्द

* पत्रिका-प्राप्ति सूत्र *

☆ स्वामी देवस्वरूपानन्द जी महाराज — मो. 09259333500
सोहम् आश्रम, परिक्रमा मार्ग, श्रीधाम वृन्दावन — ✆ 0565-2540002

☆ स्वामी कल्याण स्वरूप जी महाराज — मो. 09675724211
सोहम् आश्रम, पुराना ऋषिकेश रोड, भूपतवाला, हरिद्वार — ✆ 01334-260475

☆ श्री ईश्वरचन्द्र पंसारी
घंटाघर, अनाजमण्डी, जीन्द — ✆ 09896395560

☆ श्री त्रिलोकीनाथ मल्होत्रा
जवाहर नगर, बन्द गली, टावर के पास, हिसार — ✆ 09896889104

☆ श्री विजय कुमार गुप्ता — मो. 09256569631
सोहम् सन्त कुटिया, महेश नगर, धूरी — ✆ 01675-222675

☆ श्री कृष्णलाल बुद्धिराजा — मो. 09417262897
महेश भवन, इण्डस्ट्रीयल एरिया-ए, लुधियाना — ✆ 0161-2660922

☆ श्री बालमुकुन्द गोयल — ✆ 09255195795
683/26, गोकुल नगर, रोहतक रोड, सोनीपत — ✆ 0130-6522725

☆ श्री ब्रह्म सिंह — मो. 09250381063
485-1-बी, तंवर मार्ग, वसईदारापुर, दिल्ली — ✆ 011-25464293

☆ श्री सर्वेश दीक्षित — मो. 09917140188
पट्टी गली, पैमेश्वर गेट, फिरोजाबाद — ✆ 0561-2242933

☆ श्री सुरेन्द्र सिंगला
कोठी नं. 3578, सैक्टर-32ए, चण्डीगढ़ रोड, लुधियाना — ✆ 09814202995

प्रचार-प्रसार सहयोगी : श्रीरघुवीरशरण शर्मा मास्टरजी-वृन्दावन, श्रीसुरेन्द्रकुमार सिंगला-लुधियाना, श्रीत्रिलोकीनाथ मल्होत्रा-हिसार, श्रीविनोद कुमार जिन्दल-पानीपत, श्री सर्वेश दीक्षित-फिरोजाबाद, श्रीबीरवलदास-दिड़वा (पंजाब), श्रीराजकुमार सिंगला-पातड़ा

पत्रिका हेतु सम्पर्क सूत्र : ''सोहम् आश्रम'' परिक्रमा मार्ग, वृन्दावन (मथुरा) उ. प्र.
दूरभाष : 09259333500, 0565-2540002

मुद्रक, प्रकाशक व स्वामी श्रीस्वामी सत्यानन्द जी महाराज, अध्यक्ष अखिल भारतीय सोहम् महामण्डल द्वारा श्रीधाम प्रेस, वृन्दावन से मुद्रित एवं अखिल भारतीय सोहम् महामण्डल, वृन्दावन (मथुरा) से जुलाई में प्रकाशित। ★ **सम्पादक : स्वामी राघवानन्द**

विषय सूची

क्रम	विषय	लेखन/संकलन	पृ.सं.
1.	सम्पादकीय	–	5
2.	गुरुपूर्णिमा संदेश	–पूज्य गुरुदेव महाराजश्री..... वृन्दावन	6
3.	ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या	–पूज्य गुरु महाराजश्री के प्रवचनों से	8
4.	श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्	–श्रीस्वामी सत्यानन्दजी महाराज (उत्तराधिकारी)	10
5.	संस्कार	–ब्र. सर्वज्ञस्वरूप, सोहम् आश्रम, वृन्दावन	12
6.	मानव देह व चरित्र निर्माण	–ब्र. प्रणव चैतन्य, सोहम् आश्रम, वृन्दावन	14
7.	सदाचरण से तत्त्वबोध....	–स्वामी राघवानन्द, सोहम् आश्रम, वृन्दावन	16
8.	सद्गुरु की महिमा	–श्रीराधारमणदास	18
9.	विघ्न हरण गणपति	–रघुवीरशरण शर्मा 'मास्टरजी', वृन्दावन	20
10.	रासपञ्चाध्यायी	–स्वामी नरेन्द्रानन्द सरस्वती जी	22
11.	महाभारत के मोती	–	24
12.	गुरु कृपा	–राजेश्वरानन्द, इलाहाबाद	25
13.	गुरुकृपा से भगवत्प्राप्ति	–भक्तिमती कमला शर्मा, फिरोजाबाद	26
14.	नवग्रहों का शुभ संयोग	–ज्योतिषाचार्य लक्ष्मीकान्त, आगरा	27
15.	गावो विश्वस्य मातरः	–गौभक्त रामकुमार रावलवासिया, हिसार	28
16.	मांगलिक व्रतोत्सव पर्व	–ब्रह्मचारी गौरव	30
17.	पाठकों से अनुरोध	–	31
18.	गुरुपूजा कार्यक्रम विवरण	–आश्रम समाचार	32

मूक वाणी

सपने वो सच नहीं होते जो सोते समय देखे जाते हैं।
सपने वो सच होते हैं जिनके लिए आप सोना छोड़ देते हैं।

पत्रिका सदस्यता शुल्क

दस वर्षीय.....रु. 500/–

कृपया अपना शुल्क केवल ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा ही भेजें। शुल्क भेजते समय अपना नाम, पता, टेलीफोन नं. व पिनकोड स्पष्ट शब्दों में लिखें।

- ★ सम्पादकीय कार्य पूर्णरूप से अवैतनिक है।
- ★ पत्रिका में छपे विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है।
- ★ पत्रिका प्रकाशन से 1 माह की अवधि के भीतर ही आपत्ति मान्य होगी।
- ★ सभी विवादों का न्याय क्षेत्र मथुरा होगा।

सम्पादकीय

प्रिय पाठक वृन्द सोहम्!

महापुरुषों ने संसार को सागर की उपमा दी है। उसमें बड़े भयंकर घड़ियाल, ग्राह, मत्स्य, सर्प आदि जीव हैं। इसके साथ-साथ बहुमूल्य रत्न-मोती, मूंगा, शंख आदि भी हैं। कहीं-कहीं मनमोहक सुगन्धित कमलादि के पुष्प हैं। संसार भी अच्छी व बुरी चीजों से भरा हुआ है।

सागर में बड़ी-बड़ी तरंगें उठती हैं। उन तरंगों से प्राय: नौका या जहाज भी डूब जाया करते हैं। सागर में आया तूफान बड़ा भयंकर होता है, तटस्थ वृक्ष प्राय: डावाँडोल हो जाते हैं। उसी प्रकार इस नश्वर संसार में कभी-कभी सुख-दु:ख की लहरें गम्भीर व्यक्ति को भी विचलित कर देती हैं। जिस प्रकार जल के जहाज को हर प्रकार की कठिनाइयों से जूझते हुए सागर पार करना पड़ता है उसी प्रकार से संसार के हर प्राणी को सुख-दु:ख के भँवर से गुजरना ही पड़ता है। अन्य कोई रास्ता है ही नहीं। इस संसार सागर में कोई-कोई अत्यन्त गहराई में डूब जाते हैं और कोई ऐसे भी हैं कि पानी में रहकर भी कमलवत् असंग रहते हैं। वे पानी के गुणदोष से प्रभावित नहीं होते।

सामान्य व्यक्ति के लिए भवनिधि पार होना एक बहुत बड़ी चुनौती है। अज्ञानवश व्यक्ति सागर के ही ग्राह या घड़ियाल को नौका समझकर खुद ही सागर पार करना चाहता है। घड़ियाल भी व्यक्ति को पीठ पर बैठाकर खुशी-खुशी बीच धार में ले जाकर अपना ग्रास बना लेता है।

ज्योति को बांटे उसमें कोई कमी न होती। वह अपने में पूर्ण है। वे गुरुदेव ही नररूप हरि हैं। उनकी कृपाकटाक्ष से ही जीव भवसागर तर सकता है। जितने संसार के ताप एवं भवरोग हैं, उन सबको नष्ट करने के लिए गुरु चरण रज ही अमीय मूरिमय चूरन चारू है अर्थात् भवरोग की दवा है। रेगिस्तान की मृगमरीचिका में भटककर सूर्यताप से तपा हुआ व्यक्ति गुरुचरणों की छाँव में बैठकर अपने तापों को शमन कर लेता है। साथ-साथ चिन्तामणि, कल्पवृक्ष एवं कामधेनु के समान गुरु कृपा से मुक्ति, भुक्ति एवं शक्ति प्राप्तकर साधक अपने जीवन को धन्य बना लेते हैं।

आइये गुरुपूजा पर्व पर श्रोत्रिय ब्रह्मनिष्ठ सर्वगुण सम्पन्न सद्गुरु के चरणों में नतमस्तक होकर अपना सर्वस्व निछावर कर गुरुकृपा प्राप्त कर अपने जीवन को सफल बना लें। यही मानव जीवन की सफलता है।

॥ श्रीसद्गुरुदेव भगवान् की जय ॥

॥ सोऽहम् ॥ **-सम्पादक**

गुरु पूर्णिमा सन्देश .....!

-अनन्तश्रीविभूषित पूज्य गुरुदेव श्रीस्वामी विवेकानन्द जी महाराज

ब्रह्मस्वरूप सन्त, महानुभावो व भक्तो!

आप सभी को गुरुपूर्णिमा महोत्सव पर शुभाशीष व हार्दिक शुभ कामनायें!

आप सभी सांसारिक जीवन सुख पूर्वक जीते हुए अध्यात्म क्षेत्र में भगवद् प्राप्ति रूप लक्ष्य की प्राप्ति की ओर अग्रसर हों यह हमारा शुभ आशीर्वाद है।

अधिकतर देखने में आता है कि जो प्रश्न सरल होता है, परीक्षार्थी अक्सर उसी में फेल हो जाता है; क्योंकि वह इस प्रकार के प्रश्नों को गम्भीरता से नहीं लेता है। उसकी मानसिकता ऐसी बन जाती है कि अरे यह तो बहुत आसान है इसे तो अभी हल किए देता हूँ और वह जल्दबाजी में सात-पाँच का जोड़ बारह के स्थान पर पिचहत्तर लिख जाता है। इसी प्रकार हम अपने जीवन के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्तों को साधारण मानकर उन पर ध्यान नहीं देते हैं, और परिणामस्वरूप गलती कर बैठते हैं और दु:खों के भाजन बनते हैं। इस प्रकार के सिद्धान्त हमें आसान लगते हैं, जैसे- मानव तन बहुत ही महत्वपूर्ण है यह देवताओं के लिए भी दुर्लभ है।

बड़े भाग्य मानुष तन पावा, सुर दुरलभ सद्ग्रन्थन गावा।

सृष्टि में कर्म प्रधान ही है '**कर्म प्रधान विश्व रचि राखा**' आदि-आदि। इस प्रकार के महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त सुनकर यही कहते हैं- ''अरे! ये तो बहुत सुना है, यह कोई खास बात नहीं है''। कोई नई बात सुनाओ। ऐसे कुविचार तुरन्त दिमाग में आ जाते हैं। इस प्रकार के सिद्धान्तों को यों ही न लें गम्भीरता से लें। सात व पाँच को जोड़कर पिचहत्तर न करें।

हम कहना चाहते हैं कि मानव योनि कर्म योनि है। शेष अन्य भोग योनियाँ हैं। मानव विवेक और बुद्धिप्रधान होता है, लेकिन् अन्य जीवों में बुद्धि तो होती है किन्तु विवेक नहीं होता। इसलिए इन विवेकहीन जीवों को विधाता ने भोग योनियों में रखा है। मनुष्यजन्म में विवेक का सहारा लिए बिना ही '' जगत् में जो दृष्टिगोचर हो रहा है इन्हीं वस्तुओं में ही सुख है''इस प्रकार की कुबुद्धि का सहारा लेकर धर्म-अधर्म का विचार किए बिना ही भोग्य वस्तुओं का संग्रह करने में जो कर्म हुआ उसके फलस्वरूप पाप-पुण्यों का संग्रह हो जाता है। फिर वासनानुसार मृत्यु के समय चित्त की वृत्ति बनने के अनुसार ही अगला शरीर प्राप्त होता है-

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥ (गीता-8/6)

हे कुन्ती पुत्र अर्जुन! यह मनुष्य अन्तकाल में जिस-जिस भी भाव को स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस-उसको ही प्राप्त होता है; क्योंकि वह सदा उसी भाव से ही भावित रहता है।

इस प्रकार वासनानुसार अगला शरीर प्राप्त करके सुख-दु:ख भोगते हैं। पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, कीट-पंतग आदि सभी योनियों के प्राणी मनुष्य योनि में किए कर्मों का फल ही भोगते हैं। इसलिए सब भोग योनि में आते हैं।

मनुष्य योनि कर्म योनि है और भोग योनि भी। पिछले किए कर्म(प्रारब्ध) के अनुसार सुख-दु:ख भोगते हैं और नया कर्म कर अगले जन्म की तैयारी करते हैं। यदि विवेक के द्वारा कर्म किये जायें तो नया कर्मफल बनता ही नहीं है और प्राणी कर्म बन्धन से मुक्त होकर परमानन्द को प्राप्त होता है।

किन्तु; यहाँ बस यही भूल हो जाती है कि जो करना चाहिए वह तो नहीं करते और जो नहीं करना चाहिए वह बड़े उत्साह से करते हैं, क्योंकि विवेक का सहारा न लेने के कारण अन्त:चक्षुओं पर माया की काली चमकीली पट्टी बँध जाती है। जिसके कारण जो देखना चाहिए वह नहीं देखते और जो नहीं देखना चाहिए उसे ही देखते रहते हैं और इतना देखते हैं कि देखते-देखते तृप्ति भी नहीं होती और जीवन समाप्त हो जाता है तथा अगले जन्म के लिए बीज बो दिया जाता है।

इसी नासमझी को खत्म कर समझदार होने के लिए, जो करना चाहिए सिर्फ उसीको करना सीखने के लिए, माया की काली पट्टी हटाकर जो देखना चाहिए उसी को देखने के लिए गुरु की शरण ग्रहण करते हैं, ताकि संसारी रंगमंच पर अपना सफल अभिनय कर सकें।

नदी को पार करने के लिए नाव में दो पतवारें होती हैं। जिसके द्वारा नदी को आसानी से पार किया जा सकता है। यदि एक ही पतवार हो तो नदी पार नहीं हो सकती है, बल्कि पानी की लहरें अपने आगोश में समेंटकर हानि पहुँचा सकती हैं। इसलिए नदी पार करने के लिए दो पतवारों का होना आवश्यक होता है।

इसी प्रकार भवसागर को पार करने के लिए प्रभू स्मरण और सेवा रूपी दो पतवारें नितान्त आवश्यक हैं। इनके बिना भवसागर पार नहीं किया जा सकता है। शबरी ने सेवा और प्रभुस्मरण करके ही भवसागर पार किया था। किसी भी मुक्त महापुरुष का इतिहास देखें वे इन्हीं दो पतवारों के द्वारा ही भवसागर से पार हुए थे।

''**सेवा परमो धर्म:**'' सेवा परम धर्म है। सेवा का अर्थ है दूसरे को सुख पहुँचाना। इसमें निष्काम होना आवश्यक है नहीं तो सेवा की परिभाषा ही बदल जायेगी। निष्काम कर्म अथवा सेवा से अन्त:करण की शुद्धि होती है, और माया की जो भूलभुलइयाँ हैं वो सब समझ में आने लगती हैं। प्रभुस्मरण से पापों का नाश होता है, तत्पश्चात्, क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ का अन्तर समझ में आने लगता है। क्षेत्र भी क्षेत्रज्ञ से ही उत्पन्न हुआ है इसलिए क्षेत्र भी क्षेत्रज्ञ ही है अर्थात् वासुदेव: सर्वम् इति। यह अनुभव में आ जाता है। इस प्रकार से तत्वज्ञान को प्राप्त हुए महापुरुष बहुत ही दुर्लभ होते हैं और इनका जन्म भी अन्तिम होता है। **बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।**
वासुदेव: सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभ:॥ (गीता-7/19)

बहुत जन्मों के अन्त के जन्म में तत्त्वज्ञान को प्राप्त पुरुष, सब कुछ वासुदेव ही है-इस प्रकार मुझको भजता है, वह महात्मा अत्यन्त दुर्लभ है।

अत: किसी भी सिद्धान्त को हल्के स्तर से न लें, बल्कि गंम्भीरता से लेकर उसके अनुसार ही चलें। सेवा अर्थात् निष्काम कर्म और प्रभु स्मरण रूपी दो पतवारों को निश्चय रूप से अपनाकर इस भवसागर से पार हों। भवसागर में लहरें बहुत उठती हैं इसके लिए नौका के केवट रूपी गुरु का आश्रय लेना भी आवश्यक है। गुरु और दोनों पतवारों के सहारे आप सभी भवसागर से पार हों, ऐसी प्रार्थना करते हैं।

॥ सोऽहम् ॥

पूज्य गुरु महाराजश्री के प्रवचनों से-

ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या

जो सदा राग-द्वेष, ईर्ष्याग्नि में जलता रहता है वह कभी भी स्वरूपोपलब्धि प्राप्त नहीं कर सकता है, और न ही उसे शान्ति मिल सकती है। जिसका मन, वाणी, और कर्म एक होते हैं वही इसके अधिकारी होते हैं वही परम शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। महापुरुष तथा सद्ग्रन्थों का यही कहना है कि 'तू शुद्ध, बुद्ध, अविनाशी, अद्वितीय ब्रह्म है। किन्तु; हम मरने-जीने वाला समझ बैठे हैं। यदि महापुरुषों के वाक्य हमारे हृदय में जम जावें तो जीवन सार्थक हो जावे।

इसी विषय में श्रीरामचरितमानस में गोस्वामी तुलसीदासजी जीव के अविनाशी होने इत्यादि का बड़े ही अच्छे ढंग से प्रतिपादन करते हैं-

'ईश्वर अंश जीव अविनाशी।
चेतन अमल सहज सुखराशी॥'

अर्थात् हम ईश्वर के अंश हैं, अविनाशी, चेतन, अमल और सहज सुख की राशि हैं। जब तक हम अभ्यास नहीं कर रहे हैं, तब तक सन्तमहापुरुष और सद्ग्रन्थों की चर्चा बड़ी ही अरुचिपूर्ण प्रतीति होती है, और जब हम अभ्यास करने लगेंगे तब **''अहं ब्रह्मास्मि''**, **''अयमात्मा ब्रह्म''**, **''प्रज्ञानं ब्रह्म''**,**''तत्त्वमसि''**,**''सोहम्''** और **''शिवोहम्''** की चर्चायें बड़ी ही रुचिपूर्ण तथा मधुर प्रतीत होने लगेंगी।

अपनी सत्यता, सर्वव्यापकता, अखण्डता, और अद्वितीयपने का अनुभव करने के लिए अब ''ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'' के विषय को ठीक से समझें-

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे॥
गीता-2/20)

अर्थात् यह आत्मा किसी काल में भी न जन्मता है और न मरता है, अथवा न यह आत्मा हो करके फिर होने वाला है, क्योंकि; यह अजन्मा, नित्य, शाश्वत और पुरातन है। शरीर के नाश होने पर भी इसका नाश नहीं होता है।

इन सब बातों पर हमें विश्वास क्यों नहीं होता है? ये सब चर्चायें हमें सत्य क्यों नहीं प्रतीत होती हैं? आत्मानुभूति क्यों नहीं होती है? इन सबका क्या कारण है?

श्रीमज्जगद्गुरु शंकराचार्यजी महाराज ने लिखा है-

''श्लोकार्द्धेन प्रवक्ष्यामि यदुक्तं ग्रन्थकोटिभिः।
ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः॥''

अर्थात् श्लोक के आधे भाग में ही वह बात कह रहा हूँ, जो लगभग सभी ग्रन्थों में लिखी हुई है। किसी ने प्रश्न किया कि ऐसा क्या है जो सभी ग्रन्थों में लिखा है, जो आप श्लोक के मात्र आधे भाग में ही बता रहे हैं? उत्तर है कि-**'' ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः।''** अर्थात् ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है, तथा ब्रह्म ही जीव है दूसरा कुछ नहीं। अर्थात् यावन्मात्र जो कुछ प्रपंच दृष्टिगोचर हो रहा है, सबका सब मिथ्या है। मिथ्या उसे कहते हैं जो दिखाई तो देवे परन्तु उसकी अपनी वास्तविकता कुछ भी न होवे। उदाहराणार्थ- जल में तरंग (लहर) का अपना कोई निजी अस्तित्व नहीं होता है। यदि लहर का अपना कोई अस्तित्व है तो जल की सत्ता से ही है। यदि लहर कहे कि

मेरी तो अपनी स्वतन्त्र सत्ता है, जल से मेरा कोई प्रयोजन नहीं है तो लहर का यह मानना मिथ्या है, क्योंकि यदि जल कहने लगे कि मैं तुझसे पृथक हुआ जा रहा हूँ फिर तू स्वतन्त्र रूपेण तरंगायमान होते रहना। तो क्या जल के बिना लहर तरंगित हो सकती है? नहीं न। क्योंकि जल के बिना तो लहर नाम की कोई वस्तु शेष रह ही नहीं सकती है।

इसी प्रकार से मृत्तिका में घटवत्, सूत में चद्दरवत्, स्वर्ण में आभूषणवद् जानना चाहिए। यद्यपि मिट्टी के द्वारा बना हुआ घड़ा, सूत के द्वारा बनी हुई चद्दर तथा सोने के द्वारा बने हुए आभूषण दिखाई तो देते हैं, परन्तु इनकी स्वतन्त्रता-पूर्वक यह सामर्थ्य नहीं कि मिट्टी के बिना घड़ा अपना अस्तित्व बनाये रखे, सूत के बिना चद्दर तथा सोने के बिना आभूषण अपने नाम रूप और आकार को स्थाई रख सके।

इन सब दृष्टान्तों का अभिप्राय यही है कि जो वस्तु दिखाई तो देवे, परंतु; उसकी अपनी स्वतन्त्र सत्ता कुछ न होवे उसे ही मिथ्या कहते हैं।

असत् क्या है? जिसका तीनों कालों में कोई अस्तित्त्व ही न हो, वह असत् होता है। एक बार किसी बन्ध्या से पूछा गया कि तुम क्यों रो रही हो, आपको क्या कष्ट है? बन्ध्या उत्तर देती है कि मेरा बीस वर्षीय पुत्र जिसको मैंने बड़े दुलार के साथ पाला था। आज अचानक ही उसकी बस दुर्घटना में मृत्यु हो गयी है। मैं उसी के शोक में विलाप कर रही हूँ, हाय! विधाता ने मेरा इकलौता युवा पुत्र सदा-सदा के लिए प्रगाढ़ निद्रा देवी की गोद में सुला दिया।

सज्जनो! बन्ध्या उसे कहते हैं जिसके पुत्र पैदा ही नहीं हुआ हो। यदि जिसके पुत्र है वह बन्ध्या कैसी? जो बन्ध्या है उसके पुत्र कैसा? अर्थात् जिसके पुत्र है वह कभी बन्ध्या नहीं हो सकती तथा जो बन्ध्या है उसका पुत्र कभी नहीं हो सकता है। यानि कि बन्ध्या के पुत्र है ही नहीं तो मरेगा कैसे? इसी प्रकार आकाश के फूल, गधे के सींगादि। अर्थात् आकाश में कभी फूल नहीं होते तथा गधे के सींग भी नहीं होते। अतः ये सब असत् हैं तथा मिथ्या वह है जो देखने में तो आ रहा हो किन्तु; उसकी अपनी निजी कोई सत्ता न हो। इसलिए श्रीशंकराचार्यजी महाराज ने लिखा है-''ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या'' ब्रह्म सत्य है और जगत् मिथ्या है। मिथ्या का तात्पर्य यह है कि जहाँ तक हमारी दृष्टि जाती है, तथा जिन-जिन नाम-रूप और आकारों में उन-उन वस्तुओं को देखते हैं, यथार्थ में वे वैसी नहीं हैं। क्योंकि नाम-रूप और आकार परिवर्तनशील होते हैं तथा उन-उन वस्तुओं की जो वास्तविकता है उसमें कभी परिवर्तन होता ही नहीं है। जैसे लहर का नाम-रूप और आकार परिवर्तनशील है और इसकी यथार्थता जो जल है वह अपरिवर्तनशील है। इसी प्रकार से मिट्टी में घड़ा परिवर्तनशील और मिट्टी अपरिवर्तनशील है। सूत द्वारा निर्मित चद्दर परिवर्तनशील है तथा सूत अपरिवर्तनशील है। कोई भी वस्तु अथवा पदार्थ जिसके द्वारा निर्मित हुआ है वह अपरिवर्त-शील तथा उसके द्वारा जिसका निर्माण हुआ है उसके नाम-रूप तथा आकार परिवर्तशील हुआ करते हैं। अर्थात् किसी वस्तु अथवा पदार्थ का कारण अपरिवर्तनशील तथा उसका कार्य परिवर्तनशील होता है।

श्रीशंकराचार्यजी कहते हैं-पूरा का पूरा संसार मिथ्या है, तथा परमपिता परमात्मा ही सत्य है। परमपिता परमात्मा के अतिरिक्त जो भी देखने-सुनने में आता है वह सभी मिथ्या है।

॥ सोऽहम् ॥

प्रेमी को प्रभु त्याग नहीं सकते।

सद्गुरु की महिमा.....

★ श्रीराधारमणदास

भवाटवी बिहारकारी जीवपांथपारदम्।
सुयुक्तिमुक्तिहारसारदं सुबुद्धिशारदम्॥
सपीतपादकांबरो ब्रवीतितं स्वरामकम्।
नमामिब्रह्मधामकं श्रीसद्गुरुनमामकम्॥

संसार रूपी जंगल में विहार करने वाले अर्थात् भटकने वाले जीव रूपी पथिक को पार करा देने वाले सुबुद्धिरूपी सरस्वती तथा पाद पर्यन्त पीतवस्त्र से युक्त जिन गुरु को ज्ञानीजन स्वरूप में रमण करने वाले निर्देश करते हैं; ऐसे ब्रह्मनिष्ठ उन श्री सद्गुरु को मैं नमस्कार करता हूँ।

उपदेशक तो बहुत मिलते हैं, पर उपदेश के अनुसार ठीक-ठीक आचरण करने वाले शिष्य गिने-चुने ही मिलते हैं। यदि किसी के हृदय में ठीक-ठीक अनुराग पैदा हो और साधक ध्यान भजन की आवश्यकता समझने लगे, तो निश्चय ही भगवान् साधक को सद्गुरु से मिला देते हैं-

धनोपयोगः सत्पात्रे यस्यैवास्ति स पण्डितः।
गुरु शुश्रूषया जन्म चितं सद्ध्यान चिंतया॥

॥ दोहा॥

द्रव्य खरच सत्पात्र में, जन्म जाय गुरु सेव।
हरि सुमिरण महँ चित्त जिहिं, वह पण्डित श्रुति भेव॥

जिन सत्पुरुषों का धन सत्पात्र अर्थात् अच्छे (सन्त) पुरुषों को दान देने में खर्च होता है, जिसका जन्म गुरु की सेवा करने में व्यतीत होता है तथा जिनका मन हमेशा हरि के भजन में लगा रहता है ऐसा पुरुष ही वास्तव में पण्डित है और वहीं वेद-शास्त्रों के भेद को समझता है।

गुरु, संत और ज्ञानी पुरुषों के संग तथा सेवा करने से वर्तमान और भावी (होने वाला) दुःख नाश हो जाते हैं जैसे गंगाजल के पीने से प्यास मिटती है और पापों का भी नाश हो जाता है। जैसे किसी कमरे का हजार वर्षों का अंधकार एक बार एक दियासलाई (माचिस) जलाने से ही दूर हो जाता है, उसी प्रकार जीव के जन्म-जन्मान्तर के पाप सद्गुरु की एक कृपादृष्टि से ही दूर हो जाते हैं। छत के ऊपर जाने के लिये जैसे जीना, बाँस, सीढ़ी आदि अनेक उपाय हैं, उसी प्रकार एक ईश्वर के पास पहुँचने के लिये सद्गुरु रूपी ही एक उपाय है-

'गुरु बिनु भव निधि तरहिं न कोई।
जो विरञ्चि शंकर सम होई॥'

माँ का प्यार सब बच्चों के प्रति समान रहता है, किन्तु वह किसी बच्चे को पूड़ी, किसी को बताशा जिसे जो खाना सह्य होता है-देती है, इसी तरह सद्गुरु भी विभिन्न साधकों की शक्ति और अवस्था को देखकर साधना की व्यवस्था कर देते हैं। गुरु किसे कहते हैं?

गु शब्दस्त्वन्धकारः स्यात् रु शब्दस्तन्निरोधकः।
अन्धकार निरोधित्वात् गुरुरित्यभि- धीयते।

जो अज्ञानरूपी अन्धकार को हटाकर ज्ञानरूपी प्रकाश की तरफ अग्रसर करता है उसे गुरु कहते हैं। बिना गुरु के सार तत्त्व को समझना कठिन है-

वेद उदधि बिन गुरु लखै, लागे लौन समान।
बादर गुरु मुख द्वार है, अमृत से अधिकान॥

वेद और समुद्र के जल को कोई अपने आप (स्वत:) ग्रहण करना चाहे तो वे लवण (नमक) के समान खारे लगते हैं जब वही समुद्र का जल वाष्पीकृत् होकर के बादलों के द्वारा वर्षाया जाता है तो वह जल अमृत तुल्य हो जाता है इसी प्रकार वेद आदि का ज्ञान स्वत: प्राप्त नहीं हो सकता है, गुरु के द्वारा ही सम्भव है। भगवान् श्रीकृष्ण भी उद्धव को कहते हैं-

नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं,
प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम्।
मयानुकूलेन नभस्वतेरितं,
पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा॥

यह मनुष्य शरीर समस्त शुभ फलों की प्राप्ति का मूल है और अत्यन्त दुर्लभ होने पर भी अनायास सुलभ हो गया है। इस संसार सागर से पार जाने के लिये यह एक सुदृढ़ नौका है। शरण मात्र से ही गुरुदेव इसके केवट बनकर पतवार संचालन करने लगते हैं और स्मरण मात्र से ही मैं अनुकूल वायु के रूप में इसे लक्ष्य की ओर बढ़ाने लगता हूँ। इतनी सुविधा होने पर भी जो इस शरीर के द्वारा संसार-सागर से पार नहीं हो जाता, वह तो अपने हाथों अपने आत्मा का हनन - अध:पतन कर रहा है।

॥ सोहम् ॥

********★★ सद्गुरुदेव की आरती ★★********

आरती सद्गुरुदेव की कीजै।
तन, मन, धन सब अर्पण कीजै॥
ज्ञान प्रेम की मूरति स्वामी, समदरसी अरु अन्तरयामी।
निरखत नयन, सफल करि लीजै॥ आरती.॥
अति उत्तम वाणी की शोभा, जाको सुनत मेरो मन लोभा।
होत विमल मति भव दु:ख छीजै॥ आरती.॥
सम ब्रह्म विभु जो श्रुति गायें, सोई सद्गुरु रूप बनायें।
झरत सदामृत भरि-भरि पीजै॥ आरती.॥
सद्गुरु महिमा त्रिभुवन भारी, राम कृष्ण भी हुए सुखारी।
सद्गुरु दर्शन से अघ छीजै॥ आरती.॥
जिन पर कृपा न गुरु तुम करते, विधि हरि हर क्या भव तर सकते।
अस विचार गुरु दया करीजै॥ आरती.॥
कर जोड़े सब शिष्य मनावें, बार-बार यह विनय सुनावें।
भक्ति अनन्य गुरुजी निज दीजै॥ आरती.॥

★★★

अपनी प्रशंसा सुनकर उसमें रस मत लो ।

संस्कार

★ ब्र. सर्वज्ञस्वरूप
सोहम् आश्रम, वृन्दावन

मुहूर्तमपि जीवेच्च नरः शुक्लेन कर्मणा।
न कल्पमपि कष्टेन लोकद्वय विरोधिना॥
(चाणक्यनीति)

मनुष्य को यदि एक मुहूर्त यानी कुछ पलों का जीवन मिले तो भी उसे उत्तम कार्य करते रहना चाहिए। जबकि इस लोक-परलोक में कुकर्म करते हुए हजारों वर्ष जीना भी व्यथ है। मनुष्य का जीवन बहुत छोटा हो या बड़ा हो उसे अच्छे कर्म करते रहना चाहिए। अर्थात् मनुष्य जन्म ही भगवान् ने अच्छे कर्म करने एवं अपने धर्म के प्रति श्रद्धा, निष्ठा, आस्था सदा बनाये रखने के लिये बनाया है। यह पंचतत्त्व का शरीर चौरासी लाख योनियों को भोगकर बड़े भाग्य से प्राप्त होता है। इस दुर्लभ मानुष देह को प्राप्त कर उसका दुरुपयोग कर रहा है और अपने अमूल्य जीवन को गँवा रहा है। मनुष्य इस बात को जो पुण्यात्मा महापुरुष होते हैं वे ही समझ पाते हैं। अधिकांश लोग इसे दूसरों की भलाई-बुराई, कपट, छल, हिंसा और अपने स्वार्थपूर्ति के लिए व्यर्थ निकाल रहे हैं।

'बड़े भाग्य मानुष तनु पावा' यह सत्य है। लेकिन जो स्वार्थी विलास में ही जीवन बर्बाद कर देते हैं; ऐसे व्यक्ति इस दुर्लभ एवं अमूल्य मनुष्य शरीर का मूल्य नहीं समझ पाते। अतः इस भव सागर में मानव देह धारण कर अपने मन की दशा को शुभ संस्कारी बनाकर रखना चाहिए। शुभ संस्कार व्यक्ति में गुरु कृपा और सत्संगति से ही मिलते हैं। शुभ संस्कारों के कारण ही मनुष्य श्रेष्ठता को प्राप्त होता है। शुभ संस्कारों की सब जगह पूजा होती है। और शुभ संस्कार से ही शुभ संकल्प का जन्म होता है। शुभ संकल्प होगा तो व्यक्ति की मनोदशा पूर्णतः अच्छे विचारधारा वाली होगी। जहाँ अच्छे विचार होंगे, वहाँ वैमनस्यता, द्वेष, कटुता और हिंसा का प्रश्न ही नहीं उठता। इसलिए व्यक्ति को शुभ संस्कारी होना बहुत जरूरी है। शुभ संस्कार भी बड़े भाग्य से मिलते एवं बनते हैं।

जहाँ शुभ संस्कारों का अभाव है वहाँ मनुष्य, मनुष्य होकर भी पशुओं जैसा आचरण करते हैं। जैसे पशुओं को ये बोध नहीं कि ये मेरी माँ है, ये मेरा भाई है, ये मेरी बहन है वे तो अज्ञानतावश व्यवहार करते हैं। इसलिये आज तक जितने भी महापुरुष, सन्त महात्मा हुए हैं उनका यही प्रयास रहा है कि व्यक्ति में शुभ संस्कार किस माध्यम से आयें और व्यक्ति

अच्छे गुणों के साथ अच्छे संस्कारों वाला बने। नर से कैसे नारायण बने और मानव जीवन को सत् आचरण में कैसे परिवर्तित करें ? इसीलिए वे सतत् सत्संग के माध्यम से मनुष्य में अच्छे संस्कार एवं ईश्वरीय भक्ति का संचार करने में ही तत्पर रहते हैं।

मनुष्य को भी चाहिए कि वे भी अपना घमण्ड, अहंकार, मैं-मैं करना ये सब-कुछ त्यागकर किसी समर्थ महापुरुष सन्त एवं सद्गुरु के हाथ अपने इस अमूल्य जीवन की सूत्ररूपी रस्सी समर्पित कर दें और सद्गुरु के द्वारा बताये गए मोक्ष मार्ग एवं भक्ति मार्ग पर आरूढ़ होकर जगत् में छुपे जगदीश्वर को जानने के लिए प्रयत्नशील रहें। निश्चित है कि एकदिन भगवान् अवश्य मिले जायेंगे। लेकिन भगवान् के प्रति हमारा अनन्य विश्वास एवं सद्गुरु के वचन में श्रद्धा, आस्था और पूर्णत: निष्ठा अवश्य होनी चाहिए। इस दुर्लभ मनुष्य शरीर से ऐसा काम करना चाहिए कि संसार में हमारी अलग पहचान बनें, उत्तम चरित्र बने। और यह सब सदाचरण, शुभ संस्कार एवं सत्गुरु की कृपा से प्राप्त होता है। किसी ने कहा भी है-

''काम करो ऐसा कि पहचान बन जाए,
कदम चलो ऐसा कि निशान बन जाए।
जिंदगी तो सभी काट लेते हैं मगर,
जियो तो ऐसा कि मिसाल बन जाए॥

श्रीगुरुदेव से हम सभी प्रार्थना करें जिससे हमारे संस्कार शुभ व उत्तम हो जायें–

हे प्रार्थना गुरुदेव से ये, स्वर्ग सम संसार हो।
अति उच्चतम् जीवन बने, परमार्थमय व्यवहार हो॥
ना हम रहे अपने लिये, हम ही रहें सब के लिये।
गुरुदेव यह आशीष दो, जो सोचें हम सब के लिये॥
हम हो पुजारी तत्व के, गुरुदेव के आदेश के।
सच प्रेम के नित नेम के, सद्धर्म के सत्कर्म के॥
हो द्वेष झूठी राह से, अन्याय से अभिमान से।
सेवा करन को देश की, शान से स्वाभिमान से॥
छोटे न हों हम बुद्धि से, हों विश्वमय, हों ईशमय।
हों राममय और कृष्णमय, जगदेवमय, जगदीशमय॥
अति शुद्ध हो आचार से, तन मन हमारा सर्वदा।
अध्यात्म की शक्ति हमें, पलभर भी न कर सके जुदा॥
इस अमर आत्मा का हमें, हर श्वांस भर में ज्ञान हो।
गर मौत भी आ जाये तो, सुख दु:ख हमें समान हो॥

॥ सोहम् ॥

श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्

★ श्रीस्वामी सत्यानन्दजी महाराज
(उत्तराधिकारी)

इस संसार में ज्ञान किसे प्राप्त होता है और कौन ज्ञान से विमुख रह जाता है? यह विचारणीय विषय है। भगवद्गीता में भगवान् श्रीकृष्ण ने **'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्'** कहकर श्रद्धावान्, तत्पर एवं इन्द्रियसंयमी साधक को ही ज्ञान का अधिकारी बताया। यह श्रद्धा, लगन एवं संयम का ही चमत्कार था कि मोह के कीचड़ से निकलकर कर्त्तव्यविमूढ़ अर्जुन कर्त्तव्यपथारूढ़ होकर कहने लगता है—**"नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत। स्थितोऽस्मि गत सन्देहः।"** अर्थात् मेरा मोह समाप्त हो गया है, कर्त्तव्य व सच्चिदानन्दस्वरूप विषयक स्मृति पुनः प्राप्त हो गयी है। मैं अब अपने में ही स्थित हो गया हूँ तथा सारे संशय, ऊहापोह, तर्क-वितर्क आपकी महती कृपा से समाप्त हो गये हैं। यहाँ पर अर्जुन को भगवान् की महती कृपा कब प्राप्त हुई? जब अर्जुन अपने श्री गुरु श्रीकृष्ण योगीराज के चरणों में तत्परतापूर्वक संयतेन्द्रिय बन श्रद्धापूर्वक शरणापन्न हो गया।

श्रद्धा व गुरुनिष्ठा ने ही एकलव्य जैसे साधारण व्यक्ति को श्रेष्ठ धनुर्धर बनाकर उसे यशस्वी बना दिया। गुरु के वचनों पर श्रद्धा व विश्वास के कारण 'रामचरितमानस' में शिववरेच्छुकतपःपूता पार्वती कह देती हैं-**'गुरु के वचन न मैं परिहरऊँ। बसउ भवनु उजरउ नहिं डरऊँ।'** इसी प्रकार गुरु के वाक्यों पर अगाध श्रद्धा व विश्वास रखने वाले अयोधधौम्य के मन्दबुद्धि शिष्य उपमन्यु को कौन नहीं जानता? जिन्होंने गुरु की आज्ञा का पालन अक्षरशः करते हुए एक बार वन में भूख-प्यास से व्याकुल, अज्ञानावस्था में ऑक के फलों का सेवन कर लिया और वे अन्धे हो गये थे। गुरु ने उपमन्यु की गुरुनिष्ठा, आज्ञापालन व सहज सरलता को देख उसे परम विद्वान् होने का आशीर्वाद दे दिया। गुरु के आशीर्वाद से उनको नेत्र ज्योति तो प्राप्त हो ही गई साथ में उन्हें सारे ग्रन्थों का गूढ़ रहस्य भी समझ में आ गया। हृदय के कपाट खुल गये, जीवन की उलझी हुई ग्रन्थियाँ सुलझ गयीं उस परम गुरुभक्त उपमन्यु की। सत्य ही कहा गया है-

'यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ।
तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशयन्ते महात्मनः॥'

अर्थात् जिसकी देवताओं में पराभक्ति है और जैसी देवताओं में है वैसी ही गुरु में भी है उस महापुरुष के हृदय में शास्त्रों के कहे हुए गम्भीर रहस्य प्रकाशित हो जाते हैं। वह व्यक्ति कृतकृत्य हो जाता है। वह गुरुदेव की असीम सामर्थ्य को जानकर, कृपा को पहचान कर मुक्त हो जाता है। सदैव वह द्वैत में अद्वैत का अनुभव करता है। सखण्डता में अखण्डता देखता है। कर्म में अकर्म एवं कतृत्त्व में अकर्तृत्त्व का दर्शन करने लगता है। विषमता में समता का भाव बना लेता है। 'सियाराममय' भाव जाग्रत करके संसार के प्रत्येक प्राणी में अपनत्व करके सेवाशुश्रूषा करता है। **'सोहमस्मि', 'ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति', 'ब्रह्म सत्यं जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापरः', 'सोहमस्मि इतिवृति अखण्डा'** इत्यादि वेदान्त, श्रुति, स्मृति, शास्त्रों के द्वारा अखण्डता बोधक गूढ़ रहस्य का सार हृदय में बैठ जाता है। यह सब गुरु के प्रति श्रद्धा विश्वास के ही कारण सम्भव हो पाता है। संसार से पार होने वाले अनेकों साधक गुरु की शरण लेकर, गुरु के सहारे भवसागर पार हुए हैं। गुरु तो **'स्वयं तीर्णः परान् तारयति'** स्वयं तो तरे हुए है श्रद्धा वाले शिष्य को भी तार देते हैं।

कल्याण करने में श्रीगुरु दक्षिणामूर्ति साक्षात् शिव ही है, दोनों में कोई भेद नहीं है। कहा भी है- **श्रीशिवाभिन्नः श्रीगुरुः एवं श्रीगुर्वभिन्नः श्रीशिवः।** श्रीगुरुदेव श्रद्धालु शिष्य पर शक्तिपात कर दें तो जन्म-जन्मान्तर के पाप-ताप सब नष्ट भ्रष्ट हो जाते हैं और संसार सागर से पार होने के सारे रास्ते खुल जाते हैं। अतः गुरु के प्रति श्रद्धा ही मूल तत्त्व है जिससे ज्ञान की प्राप्ति सम्भव हो पाती है। श्रद्धा होगी तभी गुरु कृपा बरसेगी। और फिर ***'गुरु कृपा हि केवलं शिष्यस्य परं मङ्गलम्।'***

ये तो बात उनकी थी जो गुरु के प्रति निष्ठा, श्रद्धा एवं विश्वास रखते हुए सदाचारी जीवन बिताकर ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। अब उनकी चर्चा करते हैं जिन्हें ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता। इस संसार में गुरुदेव किसी भाग्य वाले को मिलते हैं। अन्यथा धोखा ही अधिक है। यदि कहीं मिल भी जाये तो उनके प्रति निष्ठा व विश्वास नहीं हो पाता। थोड़ा बहुत विश्वास हो भी जाये तो लगन व संयतेन्द्रि नहीं बन पाता। कभी गुरु की सेवा शुश्रूषा कर भी दी तो व्यर्थ के दिखावे व अभिमान में फूला नहीं समाता। कभी एक दो सेव या केला चढ़ा दिया तो बदले में मांगों की एक लम्बी लिस्ट गुरुजी को सुना देता है। पहले तो गुरुजी के नजदीक ही जाने का समय नहीं निकल पाता। और जब बहुत दिनों बाद मिलता है, तो पूरे साल का रोना-धोना एक ही दिन में सुना देता है। कुछ लोग ऐसे भी हैं जब उन पर कष्ट आता है तो वे अपनी प्रचण्ड वैखरी वाणी का उपयोग गुरु निन्दा में करते हैं। और माला इत्यादि गंगा आदि में फेंक देते हैं। कुछ लोग गुरु से मन्त्र उनकी सम्पत्ति को देखकर लेते हैं। किन्तु गुरु दीर्घायु होते देख उनका धैर्य जवाब दे जाता है। कुछ लोग धन, विद्या, पुत्र, यश, पद, प्रतिष्ठा के लिए अनेकों गुरुओं की झोलियाँ टटोलते फिरते हैं। कुछ ऐसे लोग हैं उन्हें अनेकों गुरु बनाने की लत लग जाती है। पूछो अभी कितने गुरु और बनाने हैं? तो कहते हैं कि दत्तात्रेय जी के 24 गुरुओं का विश्व रिकार्ड तोड़ना है। कुछ लोग सभी गुरुओं के मन्त्रों को एक साथ जपते हुए अपने मन्त्र की पूंछ बढ़ाते जाते हैं और कहते हैं-**'ॐ राम कृष्ण शिव हनुमान दुर्गा इन्द्राय नमः'** इत्यादि महामन्त्र है। यही हमारा मन्त्र सर्वश्रेष्ठ है; क्योंकि इसमें सभी देवताओं की शक्ति मिलकर काम कर रही है। भला ऐसे लोग कैसे ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं? जिन्हें न अपने गुरु पर पूर्ण निष्ठा है और न किसी एक मन्त्र साधन पर विश्वास ही है। गंगाजी पर गंगादास एवं यमुनाजी पर जमुनादास बन जाते हैं। सारा समय सजावट, दिखावट व बनावट में ही बिताते हैं।

कुछ शिष्य ऐसे भी होते हैं जिनमें गुरु के प्रति सेवाभाव तो होता है किन्तु महामन्द होते हैं। गुरु की सेवा करने में प्रतियोगिता करने लगते हैं। किसी सेवा के अवसर पर आपस में पहले बाली-सुग्रीव का युद्ध होता है। किष्किंधाकाण्ड का जब अखाड़ा खत्म करके जो विजयी होकर आता है वही गुरुजी को पानी पिलाने जैसी सेवा करता है। इतनी देर तक मूकदर्शक बने गुरुजी अपने लगनशील किन्तु बुद्धिहीन दो शिष्यों के बीच महाभारत का युद्ध देखते रहते हैं। ऐसे मन्दबुद्धि शिष्यों को न तो ज्ञान समझ में आ सकेगा और न भक्ति का रहस्य। ज्ञान तो केवल संयतेन्द्रिय लगनशील तथा सूक्ष्मबुद्धि व श्रद्धावान् व्यक्ति को ही प्राप्त हो सकेगा। ठीक ही भगवान् ने अर्जुन को कहा है-

'श्रद्धावान् लभते ज्ञानम्'।

आइये गुरुपूर्णिमा महोत्सव पर हम सभी गुरु के चरणों में प्रणाम करते हुए श्रद्धायुक्त होकर भक्ति व ज्ञानप्राप्ति के लिए एकसाथ मिलकर प्रार्थना करें। **सोहम्। इत्योंशम्।**

गुरू पूर्णिमा पर- नव ग्रहों का शुभ संयोग

★ ज्योतिषाचार्य लक्ष्मीकान्त
आगरा

विक्रम शुभ सम्वत् 2070 को (22 जुलाई 2013) पड़ने वाला गुरु (व्यास) पूर्णिमा का पर्व विशेष ही महत्वपूर्ण है क्योंकि इस दिन आकाशीय गोचर ग्रहों का इतना विशिष्ट शुभ योग बन रहा है जो सैकड़ों वर्षों में कभी यदा कदा ही बनता है। इस दिन सूर्योदय कर्क लग्न के साथ उदित होगा; जो उसके मित्र चन्द्र की राशि है तथा चन्द्रमा अपने गुरुदेव (वृहस्पति) की राशि में भ्रमणशील है, इसमें विशेष शुभता यह है कि चन्द्र और गुरु परस्पर एक-दूसरे से सप्तमस्थ हैं और इस योगदृष्टि को आचार्यों व महर्षियों ने गज-केशरी योग के नाम की संज्ञा दी है, अर्थात् इस दिन जन्म लेने वाले जातक को जीवन में विशेष उत्तम और उन्नतिप्रद फल देगा। इसके अलावा मंगल देव गुरु बृहस्पति के ही साथ एवं मित्र चन्द्र से भी दृष्ट हैं और भी शुभता देखिए शनि अपनी उच्च राशि (तुला) में गुरु से दृष्ट है, शनि के साथ ही राहु भी भ्रमण कर रहे हैं अतः राहु पर भी गुरु की दृष्टि है। बुध भी अपनी ही मिथुन राशि में स्वक्षेत्री होकर बलवान है तथा गुरु बृहस्पति देव के साथ ही भ्रमणशील है। ज्योतिषाचार्यों के अनुसार शुभ ग्रह बृहस्पति के साथ जो भी ग्रह युति करे या उनसे दृष्टि संयोग करे तो वह ग्रह भले ही पाप ग्रह भी हो तो उसकी अशुभता न्यून हो जाती है। और इस दिन आज हम सभी उनकी शरण ग्रहण करें। गुरु पूर्णिमा को पाँच ग्रह गुरु युक्त या दृष्ट होकर शुभ ग्रह के प्रभाव में हैं। इसके अलावा शुक्रदेव तो स्वयं शुभ ग्रह ही हैं और वे भी दैत्यों के गुरु हैं।

मूल सारांश यह है कि ज्योतिष की दृष्टि में इस गुरु पूर्णिमा को बन रहे ऐसे शुभ संयोग का हमें पूर्ण लाभ उठाना चाहिए। अतः जिन्होंने अभी तक दीक्षा नहीं ली है, सद्गुरु नहीं बनाया है उन्हें ऐसा स्वर्णिम, अमूल्य अवसर खोना नहीं चाहिए। जिस प्रकार इस पूर्णिमा को जन्म लेने वाला बालक परम भाग्यवान् होगा उसी प्रकार इस दिन सद्गुरु से दीक्षा लेने वाला व्यक्ति भी परम सौभाग्यशाली होगा। वैसे भी गुरु तो कल्याणकारी ही होते हैं। संत तुलसीदास जी ने कहा है--

''बन्दे बोधमयं नित्यं गुरुं शंकररूपिणम्।
यमाश्रितो हि वक्रोऽपि चन्द्र सर्वत्र वन्द्यते॥''

(बालकाण्ड)

चौ.- **श्रीगुरु पद नख मनि गज जोती।**
सुमिरत दिव्यदृष्टि हिय होती॥
गुरुपद रज मृदु मंजुल अंजन।
नयन अमिय दृग दोष विभंजन॥
एहि विधि करि सब संशय दूरी।
सिर धरि गुरु पद पंकज धूरी॥

ऐसे शुभ अति विशिष्ट समय पर गुरुदेव के चरण कमलों को कोटि-कोटि नमन करते हुए हम सभी उनकी शरण ग्रहण करें!

॥ सोहम् ॥

सदाचरण से तत्त्वबोध.....

★ स्वामी राघवानन्द
सोहम् आश्रम, वृन्दावन

भारतीय शास्त्रों में सदाचारी जीवन के प्रति प्राचीन ऋषि-मुनियों ने अपने जीवन के अनुभव पर आधारित वेदविहित नियमों के द्वारा संसार को चरित्र निर्माण का पाठ पढ़ाया। उनके अनुसार सदाचार के नियमों का पालन करने से मन और तन दोनों ही शुद्ध हो जाते हैं। मन शुद्ध होने के उपरान्त ही अर्थात् दैवीय सम्पत्ति युक्त होने के पश्चात् ही गुरुतत्त्व समझ में आता है, ज्ञान प्रकट होता है और अन्त में वह सदाचारी पुरुष मुक्ति पाने का अधिकारी बन जाता है।

गुरुतत्व समझने के लिए सदाचारी होना इसलिए आवश्यक है क्योंकि सदाचार से आत्मबल का विकास होता है और द्वन्द्वात्मिक परस्थितियों से ऊपर उठने का साहस जुटा सकता है। इन परस्थितियों से ऊपर उठकर उसकी बुद्धि सूक्ष्म से सूक्ष्म सिद्धान्तों को सहजता से समझने के योग्य हो जाती है। उपनिषदों में कहा है-

''भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयः।''

किन्तु; दुराचारी व्यक्ति की बुद्धि सूक्ष्म न होकर स्थूल होती है जिससे स्थूल जगत् और स्थूल शरीर के विषय में सोचने तक ही सीमित रहती है। क्योंकि दुराचारी परहित की भावना न रखकर सिर्फ अपने सुख के लिए दूसरों को कष्ट देने में ही अपना गौरव समझता है। इस प्रकार के भ्रष्ट आचरण वालों के विषय में भगवान् श्रीकृष्ण गीता में कहते हैं-

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥

(श्रीमद्भगवद्गीता-16/10)

वे दम्भ, मान और मद से युक्त मनुष्य किसी प्रकार भी पूर्ण न होने वाली कामनओं का आश्रय लेकर, अज्ञान से मिथ्या सिद्धान्तों को ग्रहण करके भ्रष्ट आचरणों को धारण करके संसार में विचरते हैं।

इसके अतिरिक्त ऐसे प्राणी मृत्युपर्यन्त रहने वाली असंख्य चिन्ताओं में फंसे रहकर विषयभोगों में तत्पर रहकर ऐसा मानते हैं कि बस 'इतना ही सुख है' और हम भाग्यशाली भी हैं कि हम सुख भोग रहे हैं। इस प्रकार की मानसिकता वाले व्यक्ति धर्म-अधर्म के विषय में विचार ही नहीं करते हैं। सिर्फ अपने हित सम्बन्धित जो भी मन में आये वही करते हैं और इसीको अपना श्रेष्ठ धर्म भी मानते हैं। इसलिए ये अभिमानी लोग अध्यात्मिक बातों को समझ नहीं सकते। अध्यात्मिक क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए अन्तःकरण मल-विक्षेप रहित होना अतिआवश्यक है। जिसके अन्तःकरण में संसारिक वासनाओं और अभिमान आदि का जाल फैला हुआ हो तो भला गुरुतत्व जैसे सूक्ष्म ज्ञान को कैसे समझ सकता है? और दुराचारी तो इन सब दुर्गुणों के भण्डार और ग्राही होते हैं।

हिन्दू-धर्म 'पुनर्जन्म और श्रेष्ठ कर्मों के सिद्धान्तों पर ही प्रतिष्ठित है।' अर्थात् कर्मों के परिणामस्वरूप ही प्राणी सुख-दुःख भोगता है। पिछले जन्मों में किये कर्मानुसार ही प्रारब्ध का निर्माण होता है इसी को ही भाग्य अथवा दैव भी कहते हैं। अधिकतर देखने में आता है कि 'जो धर्मानुसार रहता है वह संसारिक दृष्टि से दुःखी रहता है और जो अधर्म करते हैं वे सुखी रहते हैं।' यहाँ यह ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि धर्म के अनुसार जीने वाले लोग आत्मबल के धनी होते

हैं। बड़े से बड़े कष्टों को सहन करने में उनमें विशेष शक्ति होती है। विशेष बात यह है कि भगवान् इनकी हमेशा रक्षा करते हैं और ये मानसिक रूप से सुखी रहते हैं। इसलिए हमें सदैव धर्म का पालन ही करना चाहिए जिससे हमारा अगला जन्म तो सुधरे ही, साथ ही साथ हम भगवान् के विशेष कृपा पात्र भी बन सकें। इसके अतिरिक्त महत्वपूर्ण बात यह भी है कि धर्मानुसार कर्म करने से हमारा तन-मन-धन शुद्ध रहता है। जहाँ तन-मन- धन शुद्ध है वहाँ का वातावरण, खान-पान, रहना आदि भी शुद्ध होंगे। खान-पान शुद्ध रहने से मन- बुद्धि भी शुद्ध रहती है। फिर; महापुरुषों द्वारा बताये कल्याणकारी सिद्धान्त आसानी से समझ में आ जाते हैं। सूक्ष्म से सूक्ष्म ज्ञान को समझ लेते हैं और यह भी समझ में आ जाता है कि हमारे अन्तर की आवाज का क्या आशय है।

प्रत्येक व्यक्ति को धर्म करने की प्रेरणा अन्दर से मिलती है और अधर्म करने को अन्दर से ही रोका जाता है। यह देखने में आता है कि महापुरुष जटिल से जटिल समष्याओं का समाधान आसानी से ढूँढ़ निकालते हैं। क्योंकि सदाचारिता से उनका अन्त:करण इतना पवित्र हो चुका होता है कि अपने अन्दर की आवाज आसानी से सुन लेते हैं समझ लेते हैं और परमात्म प्राप्ति में सफल होते हैं। यह सर्वव्यापक परमात्मा ही गुरुरूप में सबके अन्दर बैठकर धर्म-अधर्म का विवेचन करते रहते हैं। परमात्मा सब शरीरों में आत्मरूप से विराजमान हैं। यदि जगत् से अपनी दृष्टि हटाकर अपने आत्म- स्वरूप में स्थिति करली जाय तो हम मुक्त हैं। लेकिन; ऐसा करना हर किसी के वश का नहीं है। इसलिए मन्दिर का निर्माण कराकर उसमें भगवान् की प्रतिमा प्रतिष्ठित कर दी जाती है जिससे भक्त भगवान् पर दृष्टि रखकर आगे बढ़ते हुए भगवान् को तत्व से समझकर कण-कण में जड़-चेतन सब में और स्वयं में भी भगवान् की सर्वव्यापकता का अनुभव कर सकें। इसी प्रकार सर्वव्यापकगुरु को किसी शरीर में प्रतिष्ठित करते हैं और इनकी आज्ञानुसार ही अध्यात्मक्षेत्र में प्रवेश कर मंजिल तय करते हुए अपने लक्ष्य (परमात्म प्राप्ति) को प्राप्त करते हैं। गुरु को एक देशीय नहीं समझना चाहिए अर्थात् एक शरीर में ही नहीं हैं वल्कि ये सर्वव्यापक हैं। सबमें हैं और हममें भी हैं। तभी तो गुरुभगवान् की स्तुति इस प्रकार करते हैं-

अखण्डमण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

अर्थात् अखण्ड आकाश के समान जड़-चेतन में व्याप्त हैं, उस (ब्रह्मपद) को दर्शाते हैं ऐसे उन गुरु को नमस्कार है।

ये गुरु हमारे जन्म-मरण, रोग, बुढ़ापा आदि कष्टों से मुक्ति पाने का रास्ता बताते हैं। हमें इनकी आज्ञानुसार आगे साधना पथ पर बढ़ना चाहिए। भगवान् से मिलाने वाले गुरु को साधारण पुरुष मानने की भूल नहीं करनी चाहिए। नहीं तो-

गुरु मानुष करि जानते, ते नर कहिये अंध।
महा दुखी संसार में, आगे जम के फंद॥

इस प्रकार से हम अपने लक्ष्य को कभी भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं। चाहे जन्म पर जन्म क्यों न लेने पड़ें। अत: गुरुकी सर्वव्यापकता को ध्यान में रखकर गुरु की उपासना करनी चाहिए।

यही गुरुतत्व को समझने के लिए अपना अन्त:करण पवित्र होना आवश्यक है। अन्त:करण पवित्र सिर्फ सदाचारी का ही होता है। इसलिए सदाचारी ही गुरुतत्व को समझ सकता है।

॥ सोहम् ॥

गुरु कृपा से भगवत्प्राप्ति.....

★ भक्तिमती कमला शर्मा
फिरोजाबाद

गुरु कृपा से ही जीव अपना जीवत्व खत्मकर परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है। कहने का आशय है कि गुरु ही भावसागर से पार करने का मार्ग दर्शन कराते हैं। तुलसीदासजी महाराज रामचरित मानस का शुभारम्भ गुरु चरणकमल की रज वन्दना से ही करते हैं-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा॥

गुरु के चरणकमल में परागस्वरूप जो रज है वह अत्यन्त रुचिकर, सुगंधित एवं अमृत के समान सरस है। इनकी कृपा दृष्टि जिस भाग्यशाली को प्राप्त हो जाय तो वह भव-व्याधा रूपी व्याधी से मुक्त हो जाता है। वह बड़भागी सहज में ही जन्म-मरण के चक्कर से छुटकारा पा जाता है। इसलिए कबीरदास जी महाराज कहते हैं-

गुरु गोविंद दोऊ खड़े, का के लागौं पाँय।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो बताय॥

गुरु ने अज्ञानाधंकार मिटाया और भगवान् से मिलाया। इसलिए गुरु सबसे अधिक वन्दनीय हैं। तभी तो कबीरदासजी ने गुरु के चरणों में अपने को न्योछावर किया है।

भगवान् से मिलने के पश्चात् जीव के सारे कष्ट-दु:ख समूल नष्ट हो जाते हैं। आवागमन, जन्म-मृत्यु, रोग, बुढापा, आदि सब खत्म हो जाते हैं। महापुरुषों ने तथा शास्त्रों ने मानव जीवन का लक्ष्य भगवान् की प्राप्ति करना बताया है, और भगवान् की प्राप्ति गुरु के द्वारा ही सम्भव है। क्योंकि भगवान् को प्राप्त करने का रास्ता गुरु ही तो बताते हैं। इसलिए इस महत्वपूर्ण कार्य कराने के कारण ही गुरु को जगत् में सर्वश्रेष्ठ, वन्दनीय और पूज्यनीय बताया है।

कहने का आशय यह है कि गुरु की कृपा से ही जीव सुखी हो सकता है। जो मोहरूपी मोतियाबिन्दु जिसकी आँखों में उतर आया है, यह रोग गुरु की कृपा से नष्ट हो जाता है। फिर; श्रीगुरु के चरण-नखों की ज्योति मणियों के प्रकाश के समान है, जिसके स्मरण करते ही हृदय में दिव्य दृष्टि उत्पन्न हो जाती है।

श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती॥

और वह बड़भागी शिष्य दिव्य दृष्टि पाकर सब जगह और सबमें, यहाँतक कि अपने में भी अपने भगवान् के दर्शन करने लगता है। फिर वह धन्य हो जाता है कृतकृत्य हो जाता है।

गुरुभगवान् की कृपा से ही सारे भव रोग खत्म होते हैं। इन्हीं की कृपा से भगवान् मिलते हैं। ऐसे कृपालु गुरुभगवान् के श्रीचरणों में अपने आपको कबीरदासजी की भाँति न्योछावर कर देना चाहिए। जिस प्रकार नन्हासा बालक अपनी माँ की गोद में निर्भय हो जाता है क्योंकि वह माँ के प्रति समर्पित होता है। उसे पूर्ण विश्वास होता है कि वह माँ की गोद में हर प्रकार से सुरक्षित है और माँ उसका भला ही करेगी। इसी प्रकार हमें अपने गुरु महाराज के श्री चरणों में समर्पित हो जाना चाहिए। अपने हृदय में विश्वास रखना चाहिए कि गुरुमहाराज जो भी आज्ञा देंगे अथवा जो भी शब्द कहेंगे उनसे हमारा कल्याण ही होगा। इसलिए गुरुमहाराज की आज्ञा का पूर्ण पालन करना चाहिए। तभी भगवान् से मिलन हो सकता है। आवागमन, जन्म-मृत्यु आदि कष्टों से मुक्ति मिल सकती है।

॥ सोहम् ॥

नानाविध पापों के फलस्वरूप नरकादि की प्राप्ति एवं तिर्यग्योनियों में जन्म लेने का वर्णन–

बृहस्पतिजी बोले–महाराज! जो पुरुष लज्जा का परित्याग करके अज्ञान और मोह के वशीभूत होकर, धान, जौ, तिल, उड़द, कुलथी, सरसों, चना, मटर, मूँग, गेहूँ, और तीसी तथा दूसरे–दूसरे अनाजों की चोरी करता है, वह मरने के बाद पहले चूहा होता है। फिर वह चूहा मृत्यु के पश्चात् सूअर होता है। नरेश्वर! वह सूअर जन्म लेते ही रोग से मर जाता है। पृथ्वीनाथ! वह मूढ़ जीव उसी कर्म से कुत्ता होता है, पाँच वर्षतक कुत्ता रहकर अन्त में मनुष्य का जन्म पाता है।

हे भारत! परस्त्री गमन का पाप करके मनुष्य क्रमशः भेडिया, कुत्ता, सियार, गीध, साँप, कङ्क और बगुला होता है। जो पापात्मा मोहवश भाई की स्त्री के साथ बलात्कार करता है, वह एक वर्ष तक कोयल की योनि में पड़ा रहता है। जो काम की पूर्ति के लिए मित्र, गुरु और राजा की स्त्री का सतीत्व भंग करता है, वह मरने के बाद सूअर होता है, पाँच वर्ष तक सूअर रहने के बाद दस वर्ष भेड़िया, पाँच वर्ष विलाव, दस वर्ष मुर्गा, तीन महीने चींटी और एक महीने कीड़े की योनि में जन्म लेता है। उस कीट योनि में वह चौदह महीनों तक जीवन धारण करता है। तदनन्तर पापक्षय करके पुनः मनुष्य योनि में जन्म लेता है।

हे प्रभो! जो विवाह, यज्ञ, अथवा दान का अवसर आने पर मोहवश उसमें विघ्न डालता है, वह मरने के बाद कीड़ा ही होता है। भारत! वह कीट पंद्रह वर्षों तक जीवित रहता है। फिर पापों का क्षय करके वह मनुष्य योनि में जन्म लेता है।

राजन्! जो पहले एक व्यक्ति को कन्यादान करके फिर दूसरे को उसी कन्या का दान करता है, वह भी मरने के बाद कीड़े की योनि में जन्म लेता है। उस योनि में वह तेरह वर्षोंतक जीवन धारण करता है। तदनन्तर पाप क्षय होने के पश्चात् वह पुनः मनुष्य योनि में जन्म लेता है।

जो देवकार्य अथवा पितृकार्य न करके बलिवैश्वदेव किये बिना ही अन्न ग्रहण करता है, वह मरने के बाद कौए की योनि में जन्म लेता है। सौ वर्षों तक कौए के शरीर में रहकर वह मुर्गा होता है। उसके बाद एक मास तक सर्प रहता है। तत्पश्चात् मनुष्य का जन्म पाता है।

बड़ा भाई पिता के समान आदरणीय होता है, जो उसका अपमान करता है, उसे मृत्यु के पश्चात् क्रौञ्च पक्षी की योनि में जन्म लेना पड़ता है। क्रौञ्च होकर एक वर्ष तक जीवित रहता है उसके बाद चीरक जाति का पक्षी होता है और फिर मरने के बाद मनुष्य योनि में जन्म पाता है।

हे राजन्! शूद्र–जाति का पुरुष ब्राह्मण जाति की स्त्री के साथ समागम करके देहत्याग के पश्चात् पहले कीड़े की योनि में जन्म लेता है। फिर मरने के बाद सूअर होता है। सूअर की योनि में जन्म लेते ही वह रोग से मर जाता है। पृथ्वीनाथ! तत्पश्चात् वह मूढ़ जीव उसी पाप कर्म के कारण कुत्ता होता है। कुत्ता होने पर पापकर्म का भोग समाप्त करके वह मनुष्य योनि में जन्म लेता है। मनुष्य योनि में भी वह एक ही सन्तान पैदा करके मर जाता है और शेष पाप का फल भोगने के लिए चूहा होता है।

(महाभारत, अनु.दान धर्म के 111 अध्याय से)

॥ सोहम् ॥

किसी का भी अपमान न करना उसकी सेवा करना है ।

गुरु कृपा

★ राजेश्वरानन्द
इलाहाबाद

अध्यात्म का पथ अत्यन्त कठिन व रहस्य-पूर्ण है। इस पथ का प्रारम्भ ही गुरु-शिष्य भाव से होता है।

महापुरुषों ने कहा है कि जीव जब गुरु की शरण में जाता है तो वह नरक जाने से बच जाता है, क्योंकि गुरु के द्वारा उसे सत्-असत् का ज्ञान हो जाता है।

गुरु की सरण लीजे भाई, जाते जीव नरक नहिं जाई।

गुरु अपने शिष्य पर कृपा करते हैं और उसे उत्तम बुद्धि देकर उसके अन्तर्जगत को प्रकाशित कर देते हैं। यथा-

सर्वेषामेव लोकानां यथा सूर्य प्रकाशकः।
गुरु प्रकाशकः तद् शिष्याणां बुद्धिप्रदायकः॥

(पद्मपुराण भू.खण्ड. 85/8)

गुरु कृपा से जीव के सारे दुःख-क्लेश खत्म हो जाते हैं, और वह सदा के लिए सुखी हो जाता है। अज्ञान अवस्था में जगत् को सत्य मानने के कारण ही जीव दुःख और क्लेश झेलता है। जब उसे ज्ञान हो जाता है कि जगत् की वस्तुओं से सुख प्राप्त करने का हमारे जीवन का लक्ष्य नहीं है अपितु संसारिक भटकाव को खत्म करके परमानन्द प्राप्त करने का है, अतः गुरु कृपा से संसारिक भटकाव पर पूर्ण विराम लग जाता है और सारे दुःखों का नाश हो जाता है।

जीव के सारे दुःखों का नाश वेद ज्ञाता और ब्रह्मनिष्ठ गुरु की शरण में जाने से ही हो सकता है। मात्र नाम के गुरु के पास जाने से नहीं होता; किन्तु ऐसा तो हो सकता है-

गुरुजी लड़ैं मुकद्दमा, चैला जोते खेत।
निसिदिन रहैं प्रपंच महँ, हरि सों नहि हेत॥

(भक्तमाल प्रथम खण्ड में)

जो इस भंयकर संसार सागर में डूबते-उतराते हैं उनके लिए परमाधार ब्रह्मवेत्ता गुरु ही हैं। यही गुरु प्राणी को संसारसागर से पार लगा सकते हैं।

संसारसागर से पार होने के लिए शिष्य को गीता के अर्जुन की भाँति गुरु के श्रीचरणों में समर्पित हो जाना चाहिए। अर्जुन की बुद्धि कुण्ठित हो जाती है वह निर्णय नहीं कर पाते हैं कि क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए? तब अपने हृदय की वास्तविक स्थिति को प्रकट करते हुए कहते हैं-

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः
पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे
शिष्यस्तेऽहंशाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥

(गीता-2/7)

कायरतारूप दोष से उपहत हुए स्वभाव वाला तथा धर्म के विषय में मोहितचित्त हुआ मैं आपसे पूछता हूँ कि जो साधन कल्याणकारक हो, वह मेरे लिए कहिए; क्योंकि मैं आपका शिष्य हूँ इसलिए आपकी शरण हुए मुझको शिक्षा दीजिए। शरणापन्न होने के बाद भगवान् ने अर्जुन के अज्ञान का नाश किया।

इसी प्रकार गुरु के शरण हो जाने से गुरु कृपा से हमारे क्लेशों का अन्त निश्चित है। इसमें कोई संदेह नहीं है। **॥ सोहम् ॥**

मानवदेह व चरित्र निर्माण

★ ब्र. प्रणव चैतन्य
सोहम् आश्रम, वृन्दावन

''बड़े भाग्य मानुष तन पावा।
सुर दुर्लभ सद्ग्रन्थन गावा॥''

देवदुर्लभ मानव शरीर बड़े भाग्य से मिलता है। सारे धर्मों ने इस मानव शरीर को ईश्वर से मिलने और उनके पहचान का मंदिर बताया है। यह मंदिर हमें किराये पर मिला है और मालिक की स्तुति और पूजा के रूप में हमें किराया चुकाना है। शरीर की उपमा गुलाब के फूल के साथ की गयी है। आत्मा है कागज के गुलाब को कोई पसंद नहीं करता सूँघने से उसमें गुलाब की खुशबू नहीं आती असली गुलाब की परख उसकी महक ही है। जैसे गुलाब के सामने दिखाई पड़ने वाले गन्धहीन फूलों को लोग फेंक देते हैं, वैसे ही ऐसे शरीर पर किसी का प्रेम नहीं हो सकता जो ऊपर से देखने में तो अच्छा लगता है पर उसके अन्दर रहने वाले मन के विचार व्यवहार ठीक नहीं होते, बुरे चरित्र के लोग निरोगी नहीं गिने जाते शरीर और मन का ऐसा गहरा सम्बन्ध है कि जिसका शरीर निरोगी होगा उसका मन अवश्य ही शुद्ध होगा, पाश्चात्य देशों में इस मत का एक भी नहीं है जिसका मन शुद्ध होता है उसके शरीर में कोई रोग होता ही नहीं है और हुए भी तो शुद्ध मन के द्वारा अपना शरीर निरोगी कर सकता है। सार यह है कि आरोग्य का दृढ़ साधन हमारा मन ही होता है जो शुद्धि से ही आरोग्य को प्राप्त होता है तामसिकता, आलस्य तथा बहरापन ये सारे बीमारी के ही चिह्न हैं।

यदि मंदिर हमें किराये पर मिला है तो मालिक की स्तुति और पूजा के रूप में चुकाना है। किरायेदार का दूसरा कर्त्तव्य यह होना चाहिए कि वह घर का दुरुपयोग न करे और भीतर एवं बाहर से साफ सुथरा रखते हुए नियम-संयम से रखते हुए मालिक को ऐसी स्थिति में सौंप दे जैसी स्थिति में उनसे मिला था। जीवमात्र देहधारी है सबकी शरीर की आकृति प्राय: एक-सी ही है। सुनने, देखने, सूँघने और भोग भोगने के लिए सभी साधन सम्पन्न है। इन सब बातों में समता होने पर मनुष्य शरीर को चिंतामणि कहा गया है। चिंतामणि का अर्थ है कि उसके द्वारा हमें जो चीज चाहें पा सकते हैं, जब शरीर का सदुपयोग हो अर्थात् उसे ईश्वर का घर समझा जाये तभी वह काम का है। अन्यथा वह हाड़मास और खून से भरा एक बर्तन है और उसमें से निकल कर बाहर आने वाला पानी तथा साँस दोनों जहरीली चीज है, शरीर के असंख्य छोटे-बड़े छेदों में से निकलने वाली चीजें इस योग्य नहीं हैं कि हम उसे इकठ्ठी करके रखना चाहें। उन्हें विचारने देखने और छूने पर हम उल्टी कर देते हैं। बड़े परिश्रम करने पर हम कहीं इस योग्य हो सकते हैं कि उन बाहर निकली हुई चीजों में कीड़े न पड़ने दें उनको बचा लें ऐसी दशा में कितनी लज्जा की बात है कि हम ऐसे शरीर के लिए बेईमानी, दगाबाजी, कपट, चोरी, व्यभिचार इत्यादि लाखों न करने योग्य काम करते हैं क्या हम इन्हीं कामों के लिए ऐसे शरीर को नित्य बड़े यत्न से सम्भाला करते हैं जो सब प्रकार का सम्भाल होते हुए भी ठोकर की अपेक्षा आघात सहने की शक्ति रखता है। यह शरीर की वास्तविक दशा है, जिस चीज का अच्छा से अच्छा उपयोग हो सकता है उस वस्तु का दुरुपयोग होने की सत्ता उसी में होती है। इन सब बातों में समता होने पर भी मनुष्य शरीर को चिंतामणि कहा गया है। तुलसीदासजी ने इसे **'स्वर्ग वर्ग अपवर्ग नसैनी'** कहा है।

दायित्व का भार मनुष्य को चतुर बना देता है ।

मानव जीवन का महत्त्व समझ में आ जाये और गुरुकृपा प्राप्त हो जाये तो जीवन धन्य बन जाता है। गुरु के प्रति श्रद्धाभाव एवं जीवन चरित्रवान बन जाये तो मानवजीवन सार्थक हो जाता है। गुरु शिष्य की एक अनुपम परम्परा है। गुरु ही शिष्य को योग्य बनाता है।

शिक्षा जगत् का अधिष्ठाता, आचार्य या गुरु है। एक समय था, जब गुरु गौरवशाली, ब्रह्मज्ञानी, त्यागी, तपस्वी और समाज-संचालक थे। उस समय वे सर्वाधिकारी होकर दिव्य गुणों के आधार पर स्वतन्त्र जंगलों में भ्रमण करते थे।

भारतीय संस्कृति के पोषक गुरु अपने जीवन में शिष्य से पुत्र से पराजय चाहते हैं-**'पुत्राच्छिष्यात् पराजयम्'**। इसी गरिमा के कारण वे वन्दनीय, महनीय और भगवान् से भी उच्चतर थे। उन्हें- **'गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः'** कहकर सम्मानित किया जाता था।

पर आज वरतन्तु मुनि सांदीपनि, गर्गाचार्य, समर्थ गुरु रामदास आदि की कल्पनामात्र शेष है। शिक्षा जगत् के प्रहरी मानो सुप्त हैं। शिक्षा जगत् की आधारशिला है-विद्यार्थी। उसका मन, उसकी बुद्धि बड़ी कोमल और स्वच्छ होती है। माता-पिता पहले उसके चरित्र-निर्माण के लिये विज्ञ आचार्यों के, गुरु के गुरुकुल में भेजते थे। वहीं उसके हृदय में स्वर्णिम रश्मियाँ उदय होती थीं। आचार्य देवो भव के आदर्श - श्रीकृष्ण-सुदामा, आरुणि, उपमन्यु, एकलव्य इन सबने **'आचार्य देवो भव'** का यथार्थ पालनकर संयम, समता, संतोष, स्वाध्याय को परमनिधि समझा था। वृद्धों की सेवा और गुरुजनों के प्रणति से आयु, विद्या, यश और ब्रह्मबल की वृद्धि से **'सादा जीवन उच्च विचार'**, उसके व्यक्तित्व में साकार हो उठता था। उपनिषद् प्रमाण है- **तद्विज्ञानार्थं सः गुरुमेवाभिसंच्छोत्**
समित्पाणिः श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठम्।

छात्र शब्द छत्र से बना है। छत्र (छाता) वर्षा आतप से रक्षा करता है। विद्यार्थी भी गुरु के दोषों को आच्छादित कर समाज और राष्ट्र की छत्रवत् सेवा करता था। वह स्वयं आपत्तियों को झेलता, जलता और मरता, पर दूसरों की अहर्निश सेवा करता था। वह **'जागृयान वयं राष्ट्रे पुरोहिताः'** का प्रतीक था। मानव जीवन में विद्या सर्वोपरि है। ऋषियों ने पद-पद पर कहा है-**'सा विद्या या विमुक्तये'** एवं **'विद्यया मृतमश्नुते'।**

आज देश में प्रत्येक स्तरपर हर दिशा में जन-जन के मानस में त्रास, पतन, उथल-पुथल मच रही है। राजनीति में अनाचार, भ्रष्टाचार, समाज में बलात्कार, चोरी, डकैती, अपहरण, हत्या बढ़ रही है। प्रायः रक्षक भक्षक बन गया।

व्यक्ति में सजावट, दिखावट, बनावट पनप रही है। हिन्दुत्व मिटाया जा रहा है। संस्कृति पर नया रंग पोता जा रहा है। शिक्षा के प्राण चरित्र का हनन हो रहा है। शिक्षा की दिशा व दशा बदल गयी है। अत्यन्त विषम परिस्थिति तो यह है कि विद्यार्थियों का जीवन जर्जर है। उसके कर्तव्य, आदर्श और धर्म लुप्त से हैं। फलतः ऋषि मुनि और ज्ञानभूमि का विद्यार्थी बीहड़ और ऊषर भूमि बनकर रह गया। एक समय था जब आचार्य द्रोण के संकेत पर एकलव्य ने अंगूठा काटकर उन्हें गुरु दक्षिणा दी थी। पर आज का विद्यार्थी गुरुदक्षिणा में गुरु को अंगूठा दिखा देता है। माँ सरस्वती के पावन मन्दिर का पुजारी जुआरी बन गया है, विद्यालय भ्रष्ट राजनीति के अखाड़े और छात्रावास असामाजिक तत्वों के अड्डे बने हैं। वस्तुतः उसमें न संयत आचरण है और न विद्या की कोई बात ही। इस दिशा में हम सभी को अवश्य ध्यान देना चाहिए। आइये हम सभी गुरु की शरण लें-

होय कृपा गुरुदेव की, जीव ब्रह्म हो जाय।
मोह शोक को पारकर, मोक्ष परम पद पाय॥

॥ सोहम् ॥

विघ्न हरण गणपति

★ रघुवीरशरण शर्मा 'मास्टरजी'
वृन्दावन

''विघ्नहरण मंगलकरण, श्रीगणपति महाराज।
प्रथम पूज्य हैं आप ही, करते पूरण काज॥''

गणेश जी की पूजा केवल मनुष्य मात्र ही नहीं करते है, उनकी पूजा तो देवों द्वारा भी अनादिकाल से होती चली आ रही है। और आगे भी इसी प्रकार से होती रहेगी। अरे गणेशजी तो ऐसे देव हैं जिनकी पूजा का लोभ तो देवता भी नहीं छोड़ पाये हैं। देखो भगवान् शंकर एवं माँ पार्वती का विवाह भी गणेश पूजा से ही सम्पन्न हुआ था। तथा कालान्तर में गणेशजी उन्हीं के मानस पुत्र बने। हमारे शास्त्र पुराण तो यहाँ तक कहते हैं कि पार्वती द्वारा गणेशजी की पूजा करने से ही उनका विवाह शंकर जी के साथ हुआ था। अत: गणेशजी की पूजा सभी को करनी चाहिए क्योंकि सर्व संकट को हरने वाले देव हैं।

वैसे तो गणेशजी की उत्पत्ति के बारे में कई तरह की कथाऐं प्रचलित हैं। किन्तु सभी कथाओं में उन्हें आदिदेव कहा गया है। साथ ही उनकी गणना आज्ञाकारी पुत्र के रूप में की जाती है। कथा है, एक बार पार्वती स्नान करने अन्दर गयीं, गणेशजी को द्वारपाल बना दिया तथा कह दिया कि जब तक मैं स्नान करूँ कोई भी अन्दर नहीं आने पाये। गणेशजी ने अपनी माता के आदेश का पालन किया, किसी को भी अन्दर नहीं जाने दिया, उसी समय शंकरजी भी आ गये और अन्दर जाने लगे, लेकिन गणेशजी ने माँ की आज्ञा का पालन करते हुये उन्हें भी अन्दर जाने से रोक दिया और कह दिया कि माताजी का आदेश है कि कोई भी अन्दर नहीं जाने पाये। इसलिये आप भी अन्दर नहीं जा सकते। ऐसी बात गणेशजी के मुख से सुनकर शंकरजी बहुत कुपित होकर बोले-कि जानते नहीं हो कि तुम किसको रोक रहे हो? लेकिन गणेशजी अपनी बात से टस से मस नहीं हुये तथा उन्हें अन्दर नहीं जाने दिया तब शंकरजी ने क्रोध में आकर गणेशजी का सिर धड़ से अलग कर दिया। जब पार्वतीजी स्नान करने के बाद बाहर आयीं और देखा कि उनके आज्ञाकारी पुत्र का सिर शंकरजी ने धड़ से अलग कर दिया है तो उन्होंने हाहाकार मचाना शुरु कर दिया, तीनों लोकों में हाहाकार होने लगा। पृथ्वी डावाँडोल होने लगी, देवता, राक्षस नर सभी प्राणी घबड़ाने लगे। तब देवताओं ने माँ पार्वती की स्तुति कर उन्हें शान्त किया, तब देवी बोलीं यदि मेरा पुत्र जिन्दा हो जायेगा तो संहार नहीं होगा। वरना विश्व का संहार हो जायेगा। संसार को सुखी देखने के लिये देवताओं ने शंकरजी की भी आराधना की। तब निर्णय हुआ कि सर्वप्रथम जिसका भी सिर मिले उसे गणेशजी के धड़ पर आरोपित कर दिया जाये। सभी देव उत्तर दिशा की ओर सिर खोजने के लिये निकल पड़े। उन्हें एक दन्त हाथी का सिर मिल गया उसी को लाकर गणेशजी के धड़पर आरोपित कर दिया गया। उस दिन भाद्रमास की चतुर्थी थी। इस प्रकार वे जीवित हुए और उनका नाम भी एकदन्त पड़ गया। पार्वतीजी भी प्रसन्न हो गयीं। उनकी पूजा भी मांगलिक कार्यों में सबसे पहले होने लगी। वैसे देवी भागवत में गणेशजी को पार्वती जी का मानसपुत्र भी बतलाया गया है। क्योंकि वे देवी के मैल से पैदा हुये थे और कार्त्तिकेयजी को प्रसूतिजन्य पुत्र कहा गया है।

एक बार गणेशजी एवं कार्त्तिकेय जी में बहस छिड़ गयी कि दोनों में बड़ा कौन है? किसकी पूजा

पहले हो? दोनों ही अपने-अपने को बड़ा बताने लगे। निर्णय माता-पिता के पास पहुँचा, उन्होंने कहा कि जो पृथ्वी की परिक्रमा कर पहले हमारे पास आ जायेगा वही बड़ा है। फिर क्या था, कार्तिकेय जी अपने वाहन मयूर पर चढ़कर परिक्रमा देने निकल पड़े। लेकिन गणेशजी का वाहन तो चूहा था। वे क्या करते? लेकिन गणेशजी बुद्धि के स्वामी हैं, तुरन्त उन्होंने सोचा और माता-पिता की परिक्रमा करके वहीं बैठ गये। जब कार्त्तिकेयजी परिक्रमा कर लौटे तो गणेशजी वहीं बैठे मिले, यह देखकर कार्त्तिकेय जी बोले, तुमने पृथ्वी की परिक्रमा नहीं की है; मैं परिक्रमा कर पहले आया हूँ इसलिये मैं बड़ा हूँ। तब गणेशजी ने कहा कि मैं माता-पिता की परिक्रमा कर पहले आया हूँ, अत: मैं बड़ा हूँ। इस प्रकार से दोनों की सुन लेने पर माता-पिता ने कहा कि माता-पिता से बड़ा कोई नहीं है, गणेशजी ने माता-पिता की परिक्रमा कर ली है, अत: गणेशजी ही बड़े हैं। उनकी ही पहले पूजा होगी। तभी से सभी माँगलिक कार्यों में गणेशजी की पूजा सबसे पहले होने लगी।

ऐसा भी कहा जाता है कि ''ॐ'' शुद्ध गणेश देवता का स्वरूप है। इसी से जिस प्रकार से सभी माँगलिक कार्य एवं मंत्र ''ॐ'' शब्द से प्रारम्भ किये जाते हैं उसी तरह गणेशजी की पूजा भी माँगलिक कार्यों में प्रथम की जाती है। वैसे यह कार्य कोई परम्परा नहीं, बल्कि शास्त्रीय प्रमाण है।

गणेशजी के आकार तथा अंगों के बारें में भिन्न-भिन्न मान्यतायें बतायी गयी हैं। जैसे उनकी सूँड़ हमेशा हिलती रहती है। बताते हैं कि इससे यह प्रतीत होता है कि गणेश जी सदैव सतर्क रहते हैं, उनके तथा उनके सेवक पर कोई विघ्न बाधा आये तो अपनी सतर्कता से तुरन्त उसका समाधान करते हैं। इसी प्रकार बताते हैं कि गणेशजी का पेट बहुत बड़ा है, जिससे कि उन्हें लम्बोदर कहते हैं। इसका भी कारण बताते हैं कि वे अच्छी अथवा बुरी कोई भी बात हो उसे पचा जाते हैं तथा सभी बातों का निर्णय तुरन्त एवं सूझ-बूझ से लेते हैं। इसी प्रकार उन्हें गजकर्ण (लम्बे कानों वाला) भी बताया गया है। इसका आशय है कि लम्बे कानों वाला सबकी सुनता है तथा निर्णय अपनी बुद्धि से लेता है। उनका एक ही दाँत है, जिससे वे कोई चीज चबाकर नहीं खा सकते हैं। इसलिये उन्हें मोदक (लड्डू) प्रिय हैं। चूँकि लड्डू के अन्दर कुछ नहीं होता है। इसलिये गणेशजी भी अपने अन्दर कुछ भी नहीं रखते। चूँकि उनकी आँखें छोटी है। इसका भी मतलब साफ है कि वे सभी कार्यों में अपनी सूक्ष्म दृष्टि का प्रयोग करते हैं।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि हाथी का सिर गणेशजी के धड़ पर चतुर्थी को जोड़ा गया था। जिससे उनको विशिष्ट शरीर प्राप्त हुआ था। वह चतुर्थी भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की थी। उसी समय शंकरजी ने कहा था कि तुम आज चन्द्रमा के उदय होने पर उत्पन्न हुये हो, अत: इस तिथि को शुभ तिथि माना जायेगा। इस तिथि का व्रत करना मंगलकारी तथा संकटों का निवारणकर्त्ता माना जायेगा। जो कोई इस तिथि को पुष्प, चन्दन, ताम्बूल, नैवेद्य आदि से गणेशजी की पूजा कर स्तुति करेगा उसके सारे विघ्न-बाधायें हट जायेंगे। इसी से भाद्रपदीय चतुर्थी को संकटहरण (गणेश) चतुर्थी के नाम से भी पुकारा जाता है।

''बोलो गणपति भगवान् की जय !''

॥ सोहम् ॥

रासपंचाध्यायी

★ स्वामी नरेन्द्रानन्द सरस्वती

भगवान् का वाचक प्रणव है, उसके जपके साथ परमात्मा जब तदर्थ यानी भगवान् के स्वरूप का ध्यान किया जाता है। तब परमात्मा के साथ तादात्म्यापत्ति होती है। जीव भगवान् का संस्पर्श प्राप्त करने के लिए युग-युगान्तर से साधनानुष्ठानपूर्वक जब संकल्प करता है। जब समय आता है, तब प्रभु भी सर्वाधिकार सम्पन्न ऐसे भक्त से मिलने के लिए व्याकुल हो उठते हैं। वे सत्य संकल्प है। अतएव जिस दिन उनका संकल्प भक्त से मिलने का हुआ कि जीव की तादात्म्य सिद्ध हुई। श्रीब्रज की गोपांगनाएं ऐसी ही उच्चाधिकार सम्पन्न थी। युग-युगान्तर से विविध साधना अनुष्ठान वे कर रही थीं। भगवत संस्पर्श प्राप्त करने के लिए, उनका तो संकल्प था ही आज प्रभु ने उनसे रमण करने का संकल्प किया। **भवान् अपिताः वीक्ष्य रन्तुंमनः चक्रे।** रमण करने को अथवा सम्भोग शब्द का अर्थ-सामान्य रूप से प्रचलित किसी प्रकार की कोई पाशविक चेष्टा नहीं है। जैसे कहा जाता है-**सविता गोभिः रसं भुंक्ते।** सूर्य किरणों के द्वारा रस का संभोग करता है। तो यहाँ संभोग का आत्मसात करना वैसे ही गोपियों के साथ भोग संभोग अथवा रमण का अर्थ है- भगवान् के साथ गोपियों की तादात्म्यापत्ति, अभिन्न रूप से आत्मसात कर लेना ही श्रीकृष्ण का गोपीजनों से रमण है। वास्तव में तो परमात्मा के साथ जीव की तादात्म्यापत्ति स्वतः सिद्ध है ही। जैसा कि तुलसीदास ने सीताराम के स्वरूप को बताते हुए कहा है-

''गिरा अरथ जल वीचि सम कहियत
भिन्न न भिन्न। बन्दहुँ सीताराम पद।''

गिरा और अर्थ का जैसे तादात्म्य (अभेद सम्बन्ध) है। गिरा पानी वाणी अभिधान है। अर्थ अभिधेय है। सिद्धान्त है। सच्चिदानन्द समुद्र में अभिधानात्मक (नामात्मक) प्रपंचोत्पादनानुकूल शक्ति से अवच्छिन्न चैतन्य (संवित) का जो विवर्त है, वही परावाक् रूप विवर्त है। वह परावाक् स्वयं शुद्ध ब्रह्म नहीं। अनादि निधन ब्रह्म का जो शब्द रूप विवर्त है। वह परावाक् है यही प्रणव है और प्रणव अकार रूप है। इसी से **'अक्षराणां अकारोऽस्मि'** अथवा **'अकारो वै सर्वावाक्'** भी कहते हैं। सच्चिदानंद समुद्र की एक तरंग अभिधानात्मक है, तो दूसरी अभिधेयात्मक (रूपात्मक पदार्थ रूप) है, अभिधान और अभिधेय में (नाम रूप में) अथवा गिरा एवं अर्थ में मीमांसा को एवं वैयाकरण तादात्म्य का सम्बन्ध माना जाता है। **'कार्यं यम विभाव्यते किमपि सत् स्पन्दैन सव्यापक-स्पन्दन-परावाक्-ध्वनि तरंग रूपा'** उसी से अभिश्रेष्ठ रूपों की अभिव्यक्ति तरंग है। जल

नहीं तो तरंग भी नहीं इस अन्वय व्यतिरेक की दृष्टि से तरंग जल रूप ही है। समुद्र से तरंग का अभेद तो है ही विभिन्न तरंगों का भी (जल रूप होने के कम्पन) परस्पर अभेद है। और फिर तत्तत् अगणित तरंगों का अपने अधिष्ठान है जल (समुद्र) से तो अभेद स्वत: सिद्ध है ही इस प्रकार अभिधानात्मक आदि परावाक् का अभिधेयात्मक प्रपंच से दूसरे शब्दों में गिरा अर्थ का तथा जल बीचि का प्रातीतिक भेद होने पर भी वस्तुत: अभेद है, तादात्म्य है। वेदान्तोक्त यही अनिर्वचनीयता ही सीताराम का स्वरूप है। अत: नन्ददास ने रास के वर्णन में श्रीकृष्ण के साथ गोपांगनाओं का अभेद प्रदर्शित करते हुए कहा है-'शब्द और रूप का अभेद वत् मो में उनमें अन्तरो एको पल भर नाहिं ज्यों निरखों मो माहि तुम त्यों मैं उन्हही माहिं, तरंगनि वारि ज्यौ।' गोपेश्वर का अभेद व्यक्त करने के लिए यही भाव शंकराचार्य ने भी प्रकट किया।

सत्यपि भेदाय गमे नाथ तवाहं न मामकीनस्त्वम्।
समुद्रो हि तरंग: क्वचन समुद्रो न तारंग:॥

तुलसीदास ने कहा-

सो तें तोहि ताहि नहीं भेदा।
वारी बीचि जिमि गावहि वेदा॥

दूसरे रूप में - **कहाँ चन्द्रिका चन्द्र तजि।**
प्रभाविहाइ भान कहँ जाई॥

गोपीभाव और राधाभाव का भेद- सारांश यह है कि जैसे जलके अधीन चन्द्रिका की महाकाश के अधीन मठाकाश-घटाकाश की एवं बिम्व के स्थिति का अर्थात् जीव के जीवन की सम्पूर्ण स्थिति गति प्रवृत्तियों का पूर्णतम जल से तरंग की भाँति, भगवान् के साथ तादात्म्य अभेद है। फिर भी यह बहिरंग अभेद है, किन्तु जल के साथ जल की शीतलता, मधुरता सदृश श्रीराधारानी का श्रीकृष्णचन्द्र के साथ अन्तरंग तादात्म्य अभेद है। आनन्द सुधासिंधु की तरंगें गोपियाँ हैं। तो इस आनन्द सुधा समुद्र का माधुर्य सार सर्वस्व है। उसकी सर्वाधिष्ठातृ देवी राजेश्वरी वृषभानुनन्दिनी श्रीराधारानी हैं। इसीलिये श्रीराधाकृष्ण के विहार में-विरहमान भ्रम को न लेश जहाँ-कहाँ गाया हो संप्रयोग शृंगार में (प्रेम) में मिलने के अवसर पर कंचुकी हार रोमांचादिका किंचित् सव्यवधान भी अदृश्य होता है। इसी दृष्टि से संभव विरहिणी एक गोपी कहती है-

हरो नारोपिता कण्ठे भयाविश्वलेषभीरुणा।
इदानीं त्वन्तरं प्राप्ता पर्वता सरित नदा:॥

संत ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं कि पुष्प की मधुरिम गंध का रसास्वादन रसी व्यक्ति की घ्राणेन्द्रिय से किया जाता है। इसमें आस्वाद्य आस्वादक रूप-भेद का व्यवधान है। इसलिये श्रेष्ठ बात तब होती कि पुष्प स्वयं चेतन होता और व्यवधान रहित होकर स्वकीय गंधामृत का स्वयमेव उपभोग करता।

॥ सोहम् ॥

गावो विश्वस्य मातरः

★ गौभक्त रामकुमार रावलवासिया
हिसार

आज देश दु:खी है, प्रजा दु:खी है। सारा चराचर जगत् दु:खी है। इसका एकमात्र कारण है गौमाता का दु:खी होना। जबसे भारत एवं अन्यान्य देशों में गोवध होने लगा है, तबसे समस्त विश्व की प्रजा-जीव-जन्तु दु:खी रहने लगे हैं।

राजा का धर्म होता है प्रजा की रक्षा करना। परन्तु आज का शासक प्रजा को दु:खी देखकर चुपचाप बैठ जाता है क्योंकि शासक में खुद देश के प्रति निष्ठा, सद्भावना एवं समझदारी नहीं है। मुझे क्या करना चाहिए? क्या नहीं - तो गो-सेवा तो बात ही अलग है।

सनातन वैदिक धर्म ही हमारा धर्म है, इसका मूल ग्रन्थ है वेद। वेद की घोषणा है—

मातृदेवो भव!

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में चार माताएँ होती हैं। पहली है जन्मदात्री जननी, दूसरी गो-माता, तीसरी भू माता और चौथी है जगन्माता परमेश्वरी श्रीराधारानी। माँ के दूध को बच्चा बचपन में ही पीता है। पर गो-माता तो हमारा जन्म से मरण तक बल्कि मरने के बाद जो वेतरणी पार कराने वाली भी गो-माता ही है।

इसलिए गो का सदैव सत्कार, पूजन, दर्शन बड़ी ही सौभाग्य की बात है। गायों की महिमा अवर्णनीय है--

''गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश।''

गाय के शरीर में चौदह लोकों का वास है। तेतीस करोड़ देवी-देवता हमारी गो माता में आकर विराजे और माता लक्ष्मी ने स्वयं गो के गोबर में आकर वास किया।

अत: जब गायों की हिंसा होती है तो वह रुष्ट होकर आर्थिक सम्पत्ति से हीन बना देती है। अत: कभी गाय के साथ हिंसा नहीं करनी चाहिए।

जैसे-शिशुओं के, अंगहीनों के, बूढ़ों के, विधवाओं के रक्षणालय होते हैं। वैसे ही गायों के भी संरक्षणालय होने चाहिए।

अत: हर एक को चाहे वह नगर वाला हो, ग्रामवाला हो, गाय की महिमा को हर एक को समझ लेना चाहिए।

जिस जगह गो का रक्त गिरता है। उस नगर के, उस प्रान्त के, उस स्थान के सभी आध्यात्मिक कार्य नष्ट हो जाते हैं। गाय ही धर्म है, धर्म ही गाय है। गाय बचेगी धर्म बचेगा, देश बचेगा, संस्कृति बचेगी। आप हम और ये समाज बचेगा। **'एकै साधे सब सधै'** के अनुसार गो माता की रक्षा करना हम सबका परम कर्त्तव्य है। कहा गया है-

''गावो विश्वस्य मातरः''

गो समस्त प्राणियों की परम श्रेष्ठ शरण है। यह सम्पूर्ण विश्व की माता है। इसकी पूजा से समस्त देवताओं की पूजा है। इसके निरादर से समस्त देवताओं का निरादर है।

यह भारतीय संस्कृति की प्रतीक स्वरूपा है। जैसे देवताओं का राजा इन्द्र है। वैसे ही गायों के राजा गोविन्द हैं।

परमात्मा ने मानव को बौद्धिक एवं आत्मिक गुणों से सम्पन्न करके इसलिए इस धरती पर भेजा था। आशा थी कि वह सृष्टि को सौन्दर्य प्रदान करने में उसकी कल्पना को साकार बनायेगा पर कैसी विडम्बना है कि अपने स्वार्थ-साधनों में उलझकर अपनी हठ-बुद्धि के कारण वह न केवल संसार को कुरूप बना रहा है बल्कि अपने आपको अमानवीय घोषित करने में गौरव अनुभव कर रहा है। आज हमने वैदेशिक सभ्यता के अंधानुकरण एवं अपनी दुर्बलता के कारण मानवमात्र की धाय-गाय को आदर देने में कमी कर दी तभी हम दिग्भ्रान्त पथिक की तरह इधर-उधर भटकते हुए दिख रहे हैं। लगता है कुछ छूट रहा है। गाय जो रो रही है, अपनी संतान पर! जब हम अपनी ही आस्था से टूट गए तो संसार पथ भ्रष्ट क्यों न होगा? हम भगवान् को कहाँ ढूँढ रहे हैं।

वेद-शास्त्रों ने कहा है- तीर्थ स्थानों में जाने से, ब्राह्मणों को भोजन कराने से, सभी व्रतों और उपवासों के करने से, महादान देने से, पृथ्वी की परिक्रमा, तपस्या और यज्ञों से, शास्त्रीय वेद वाक्यों में जो पुण्य है। और यज्ञ दीक्षा ग्रहण करके जो पुण्य अर्जित होता है। वे सभी पुण्य केवल गाय को तृण (तिनका-घास) खिलाने भर से परिक्रमा कर प्रणाम करने से तत्क्षण ही मिल जाता है। इसमें कोई सन्देह नहीं है।

गाय के प्रति वर्तमान में जो व्यावसायिक दृष्टिकोण स्थित किया जा रहा है जिससे आज वह विश्व माता बूचड़खानों की शिकार बन रही है।

भगवान् राम-कृष्ण का इस धरा पर आना ही गाय-संत-ब्राह्मणों के लिए और हम मरण धर्मा लोगों को गोधर्म बताने के लिए हुआ।

दो. **विप्र धेनु सुर संत हित लीन मनुज अवतार।**

निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥

जन्म से लेकर मरण तक एक भी ऐसा संस्कार नहीं जो बिना गो के सम्पन्न होता हो।

चाहे वह नामकरण संस्कार हो, चाहे वह उपनयन संस्कार हो, चाहे वह पाणिग्रहण संस्कार हो, चाहे वह अंतिम संस्कार हो। मरने वाला व्यक्ति यह सोचता है कि मरते-मरते मेरे हाथ से कम-से-कम एक गो का दान तो अवश्य हो ही जाये। क्योंकि गाय स्वर्ग की सीढ़ी है, गाय ही सनातन है। गाय स्वर्ग में भी पूजी जाती है।

जरूरत विश्वास की है। बिना विश्वास के भगवान् भी नहीं मिलता। विश्वास ही फल का देने वाला है। जय गो माता की।

॥ सोहम् ॥

पाठकों से अनुरोध

प्रिय पाठकों को बताना चाहेंगे कि पत्रिका पर चिपके आपके पते के ऊपर छोटे-छोटे अक्षरों में आपकी 'सदस्यता कब से कब तक है' का समय लिखा होता है। आपसे अनुरोध है कि समय पूर्ण होने पर अपनी सदस्यता का नवीनीकरण कराते रहें, जिससे पत्रिका आपके पास यथासमय पहुँचती रहे। आपसे यह भी अनुरोध है कि अपनी व्यस्त जिन्दगी में से दो-चार पल निकालकर पत्रिका को ध्यान से अवश्य पढ़ें। हो सकता है कि आपको सुख-शान्ति प्राप्त करने का कोई उपाय मिल जाय और आप सदा के लिए सुखी हो जायें। यह सच है कि अध्यात्म प्रसाद पत्रिका गुरुभगवान् का प्रसाद स्वरूप है इसलिए यह प्रसाद प्रत्येक घर में पहँचे तो निश्चय ही सब का भला होगा, और पाठकों से यह भी निवेदन है कि यदि पत्रिका प्रकाशित माह की 15 तारीख तक न मिले तो पत्रिका कार्यालय में अवश्य सूचित करें जिससे आपके पास दुवारा पत्रिका भेजी जा सके।

★ *अध्यात्म प्रसाद पत्रिका का सदस्यता फार्म* ★

सदस्य का नाम.....

पता.....

पिन कोड.....टेलीफोन/मो.नंबर .....

सदस्यता-दसवर्षीय। ★ **राशि भेजने हेतु-नगद/मनी ऑडर/चैक/ड्राफ्ट।**

सदस्यता शुल्क भेजने का पता- **श्रीस्वामी विवेकानन्दजी महाराज**

सोहम् आश्रम, परिक्रमा मार्ग,वृन्दावन, मथुरा-281121 (उ. प्र.)

----------★ नीति वचन ★----------

वरं हि नरके वासो न तु दुश्चरिते गृहे।
नरकात् क्षीयते पापं कुगृहान्न निवर्तते॥

नरक में निवास करना अच्छा है, किन्तु दुश्चरित्र व्यक्ति के घर में निवास करना उचित नहीं है। नरकवास के कारण पाप विनष्ट हो जाता है, किन्तु दुश्चरित्र व्यक्ति के घर में निवास करने से पाप की वृद्धि होती है।

॥ सोहम् ॥

मांगलिक व्रतोत्सव पर्व

★ ब्रह्मचारी गौरव

जुलाई से सितम्बर (सन् 2013, श्रीसम्वत् 2070 शाके 1935

तिथि	वार	तारीख	पर्व (महोत्सव)
त्रयोदशी	शुक्रवार	05 जुलाई	शिव चतुर्दशी व्रत
अमावस्या	सोमवार	08 जुलाई	सोमवती अमावस्या
द्वितीया	बुधवार	10 जुलाई	श्रीजगन्नाथ रथयात्रा
चतुर्थी	शुक्रवार	12 जुलाई	विनायकी चतुर्थी व्रत
एकादशी	शुक्रवार	19 जुलाई	देवशयनी एकादशी व्रत
द्वादशी/त्रयोदशी	शनिवार	20 जुलाई	विजया पर्वती व्रत।
पूर्णिमा	सोमवार	22 जुलाई	गुरु पूर्णिमा महोत्सव
एकादशी	शुक्रवार	2 अगस्त	कामिका एकादशी व्रत
अमावस्या	मंगलवार	6 अगस्त	हरियाली अमावस्या (मंगला गौरी व्रत)
द्वितीया	गुरुवार	8 अगस्त	सिंधारा दौज
तृतीया	शुक्रवार	9 अगस्त	हरियाली तीज।
पंचमी	रविवार	11 अगस्त	नाग पंचमी (चौरसिया दिवस)
सप्तमी	मंगलवार	13 अगस्त	तुलसीदास जयन्ती
नवमी	गुरुवार	15 अगस्त	स्वतंत्रता दिवस
एकादशी	शनिवार	17 अगस्त	पवित्रा एकादशीव्रत
पूर्णिमा	बुधवार	21 अगस्त	रक्षाबन्धन
षष्ठी	सोमवार	26 अगस्त	हलषष्ठी व्रत (हरछठ)
अष्टमी	बुधवार	28 अगस्त	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी व्रत
नवमी	गुरुवार	29 अगस्त	नन्दोत्सव
एकादशी	रविवार	1 सितम्बर	अजा एकादशी व्रत
अमावस्या	गुरुवार	5 सितम्बर	कुशोत्पाटिनी अमावस्या
तृतीया	रविवार	8 सितम्बर	हरितालिका तीज व्रत, वाराह जयंती
चतुर्थी	सोमवार	9 सितम्बर	श्रीगणेश उत्सव
पंचमी	मंगलवार	10 सितम्बर	ऋषि पंचमी
षष्ठी	बुधवार	11 सितम्बर	बल्देव छठ। ललिता जयन्ती
अष्टमी	शुक्रवार	13 सितम्बर	श्री राधा अष्टमी व्रत (नवमी क्षय)
एकादशी	रविवार	15 सितम्बर	जलझूलनी पद्मा एकादशी व्रत
द्वादशी	सोमवार	16 सितम्बर	श्रीवामन जयन्ती
त्रयोदशी	मंगलवार	17 सितम्बर	प्रदोष व्रत, विश्वकर्मा पूजा
चतुर्दशी	बुधवार	18 सितम्बर	गणेश विसर्जन, अनन्त चतुर्दशी व्रत
पूर्णिमा	गुरुवार	19 सितम्बर	स्नानदान पूर्णिमा
नवमी	शनिवार	28 सितम्बर	मातृनवमी
एकादशी	सोमवार	30 सितम्बर	इन्दिरा एकादशी व्रत

॥ सोहम् ॥

धर्म की जय! ⋆ सोऽहम् ⋆ सत्य की जय!!

श्रीसद्गुरुदेव भगवान् की जय! ⋆ ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः ⋆ श्रीगोपालकृष्ण भगवान् की जय !!

अनन्तश्रीविभूषित परमविरक्त ब्रह्मलीन सद्गुरुदेव श्रीस्वामी महेशानन्द गूदड़ी वाले महाराज का

गुरुपूर्णिमा–महोत्सव

समस्त सद्गुरुचरणानुरागियों को यह जानकर अपार हर्ष होगा कि गत वर्ष की भाँति इस वर्ष भी निर्णय लिया गया है कि पंजाब प्रान्त में लुधियाना, हरियाणा प्रान्त की फतेहाबाद (हिसार) तथा अन्य प्रान्तों की वृन्दावन धाम में गुरुपूजा मनाई जाएगी। ★ **कार्यक्रम निम्नवत् है**–

1. **लुधियाना (पंजाब) ★ मो. 09417262897, 09814021936, 09814202995, 09644019338**
   आषाढ़ शुक्ल नवमी बुधवार–दि. 17/07/2013 ; प्रातः 8 बजे रामायण का पाठ होगा।
   आषाढ़ शुक्ल दशमी गुरुवार–दि. 18/07/2013 प्रातः 8 बजे से 9 बजे तक हवन तथा 9 बजे से 11 बजे तक गुरु महाराजश्री का प्रवचन, आशीर्वाद, गुरु पूजा तत्पश्चात् भण्डारा एवं प्रसाद वितरण होगा।
   स्थान–शिवशक्ति मन्दिर, सूफियाचौक, इण्डस्ट्रीयल एरिया–ए, लुधियाना
2. **फतेहाबाद (हरियाणा) ★ मो.–09416793937, 09416325272, 09812520279, 01667–220215**
   आषाढ़ शुक्ल एकादशी शुक्रवार–दि. 19/07/2013; प्रातः 8 बजे रामायण का पाठ होगा।
   आषाढ़ शुक्ल द्वादशी शनिवार–दि. 20/07/2013; प्रातः 8 बजे से 9 बजे तक हवन होगा तथा 9 बजे से 10.30 बजे तक गुरु महाराजश्री का प्रवचन, आशीर्वाद, गुरु पूजा तत्पश्चात् भण्डारा एवं प्रसाद वितरण होगा। **स्थान–राम सेवा समिति धर्मशाला, अनाजमण्डी, फतेहाबाद**
3. **वृन्दावन धाम (उ. प्र.) ★ मो.09259333500, 0565–2540002, 09254100750, 09410077402**
   आषाढ़ शुक्ल त्रयोदशी/चतुर्दशी रविवार–दि. 21/07/2013 को प्रातः **ब्रह्मलीन पूज्यपाद श्रीस्वामी ब्रह्मानन्दजी महाराज 'महेश'** की पुण्य स्मृति में हवन, गीता पाठ तथा भोजन भण्डारा होगा। मध्याह्न 2 से 5 बजे तक सन्तों के सद्उपदेश एवं श्रद्धांजली समारोह तथा 'श्रीराम–श्याम लीला संस्थान' के संस्थापक स्वामी लेखराज तथा ओमप्रकाश के द्वारा सायं 6 बजे से रात्रि 11 बजे तक रासलीला होगी।
   आषाढ़ शुक्ल पूर्णिमा सोमवार–दि. 22/07/2013; प्रातः श्रद्धेय श्रीस्वामी विवेकानन्दजी महाराज सन्त मण्डली सहित विधिपूर्वक सद्गुरुदेव भगवान् का पूजन करेंगे। तत्पश्चात् श्रद्धालु भक्तजन 11 बजे तक भक्तिभाव सहित सद्गुरुदेव भगवान् का पूजन करेंगे। तदुपरान्त भक्तराज सेठ श्रीशिवरामजी जिन्दल हिसार की पुण्य–स्मृति में श्रीमहावीरजी जिन्दल, श्रीरविन्द्रकुमारजी जिन्दल तथा श्रीनरेन्द्रकुमारजी जिन्दल के द्वारा समष्टि भण्डारा होगा।

संरक्षक :
अनन्त श्रीविभूषित श्रीस्वामी विवेकानन्दजी महाराज

निवेदक :
श्रीस्वामी सत्यानन्द जी महाराज (उत्तराधिकारी)

सहायता भेजने का पता :
श्री महेशानन्द सोहम् धर्मार्थ आश्रम
परिक्रमा मार्ग, श्रीधाम वृन्दावन–281121
फोन नं. 0565–2540002

विशेष सूचना : संस्था से जो लोग जुड़े हैं वे सभी लोग अपना पूरा पता व फोन नं. तथा यदि हो तो E-mail ID कार्यालय के मो.नं. 09259333500 पर सूचित करें या फिर आश्रम के E-mail : soham.ashram01@gmail.com पर भेजें। जिससे हम आप सभी को शीघ्रातिशीघ्र संस्था सम्बन्धी जानकारी दे सकें।

संसार का सबसे सरल कार्य है सत्संग ।